राष्ट्रीय हिन्दी मासिक

पत्रकारिता आपके हिस्से की

लोक असर

समाज,सियासत,साहित्य, कला एवं संस्कृति का आईना

वर्ष 03 अंक- 12

माह-दिसंबर-2020

मूल्य- 120/- रुपये

5

जंगो रायतार विद्या केतुल के संस्थापक शेर सिंह..

विषय सूची

5

भारत में अगर किसी समुदाय ने सबसे ज्यादा ...

12. क्यों उपेक्षित है आज भी वीर नारायण सिंह की शहादत

15. आंगादेव यानी क्या?

19. परलकोट विद्रोह के जननायक आदिपुरुष एवं अमर शहीद गेंदसिंह नायक की शौर्य गाथा

23. छत्तीसगढ़ का 'कंवरी गढ़' आज का कंवर

24. वीर मेला राजाराव पठार के 10 बरस का ऐतिहासिक सफर

26. राजा राव पठार बना देवभूमि 'वीर मेला' में आते हैं लाखों श्रद्धालु

28.जनजातीय कविता भाषा और संस्कृति

30. आदिवासी न कल हारा है, न आज हारेगा, ना कभी कोई हरा पाएगा...

34

सोन पेड़ सरगी

38

संख्या के अनुरूप हो आरक्षण का मापदंड

39

कैसे देखते हैं समाज के दिग्गज नेता, समाज

41

शहीद वीर नारायण सिंह की आदमकद प्रतिमा

44

गोंडी धर्मकोड का पृथक कॉलम की मांग

संपादक-**दरवेश आनंद**,उप संपादक-**ज्योति किरण**, साहित्य एवं कला संपादक-**शिवकुमार अंगारे**, सलाहकार संपादक मंडल-**प्रो.के.मुरारी दास, उत्तमकुमार**, हमारे स्थायी स्तंभकार- **विश्वनाथ देवांगन,पूर्णिमा सरोज**,विधिक सलाहकार-**अविनाश चंद साहू**,(हाईकोर्ट अधिवक्ता)

संपादकीय कार्यालय -पुलिस थाना के पीछे तहसील कॉलोनी गुंडरदेही,जिला बालोद (छत्तीसगढ़)पिन 491223,मोबा.9425526594

ईमेल -**editorlokasar@gmail.com**

रचनाएं आमंत्रित है

समाज सियासत साहित्य कला एवं संस्कृति का आईना लोक असर में आमंत्रित है शोध परक गंभीर व विश्लेषणात्मक लेख कविताएं कहानियां आदि. रचनाएं और दलित साहित्य व दलित विमर्श पर सामग्री. रचनाओं को मौलिक, अप्रसारित, अप्रकाशित होने का प्रमाण पत्र भी संलग्न करें. रचना की प्रति अपने पास सुरक्षित रखें. प्रकाशित नहीं होने वाली रचनाओं को वापस करने की जिम्मेवारी हमारी नहीं होगी. लोक असर के आगामी अंक पर केंद्रित करके प्रकाशित करने की योजना है.

रचनाकारों/ लेखकों से आग्रह है कि अपनी रचनाएं हमें इस पते पर भेजें

लोक असर -संपादकीय कार्यालय -पुलिस थाना के पीछे गुंडरदेही

जिला बालोद 491223-ईमेल-editor lokasar@gmail.com,फोन नंबर 9425-26594

प्रकाशक, मुद्रक और स्वामी दरवेश आनंद द्वारा **मयंक आफसेट**, कंकाली तालाब के सामने रायपुर (छ.ग.) से मुद्रित एवं मरार पारा वार्ड क्रमांक 8 बालोद,जिला-बालोद से प्रकाशित*(सभी विवादों का न्यायिक क्षेत्र बालोद होगा)

वीर मेला सफर का दसवां वर्ष

दरवेश आनंद
संपादक

आदिवासी समाज अपने अधिकारों को लेकर सदैव सजग रहा है। अपने अधिकारों की लड़ाई स्वयं लड़ते आए हैं। वह चाहे अंग्रेजी हुकूमत हो, या कि स्वाधीन भारत में सत्ता में बैठी सरकारें हो । अपने ज्वलंत मुद्दों एवं समस्याओं को लेकर सोई हुई सरकार को जगाने के लिए कभी पीछे नहीं रहे हैं । छत्तीसगढ में आदिवासियों ने ३२ प्रतिशत आरक्षण को लेकर राजाराव बाबा की तपोभूमि राजाराव पठार में लगातार आंदोलन, धरना, चक्काजाम करते हुए सफलता हासिल की है। इसे वे बाबा का आशीष भी मानते हैं।

यूं तो वीर मेला का आयोजन वर्ष २०14 से आयोजित किया जा रहा है। वीर मेला का यह नवम वर्ष है, सही अर्थों में। किंतु, हम वीर मेला के सफर को 10 वर्ष पूरा मानकर इसलिए चल रहे हैं, क्योंकि वर्ष २०१२ में आदिवासियों के ३२% आरक्षण को देने के लिए सरकार को बाध्य होना पड़ा था। इसी खुशी में आदिवासी समाज द्वारा राजाराव पठार में तीन दिवसीय मेला आयोजित करने का सामूहिक निर्णय लिया गया और मेला का स्वरूप तय किया गया। और प्रतिवर्ष 8, 9 एवं 10 दिसंबर को वीर मेला आयोजन का समय निर्धारित किया गया। तब से लेकर राजाराव पठार में प्रतिवर्ष वीर मेला लगता है। उल्लेखनीय है कि 10 दिसम्बर छत्तीसगढ के महान स्वतंत्रता सेनानी वीर नारायण सिंह की शहादत दिवस है। इस वीर मेला का उद्देश्य शहीद वीर नारायण सिंह की शहादत को चिरस्थायी बनाने एवं उनकी शौर्य गाथा को नई पीढ़ी तक पहुंचाने के साथ ही समाज को आदिम संस्कृति से रुबरु कराने का एक सार्थक प्रयास है। वीर मेला में विशेषकर देव मिलन, आदिवासी हाट बाजार, आदिवासी लोक महोत्सव, आदिवासी साहित्य, संस्कृति के साथ आदिवासी प्रतिभा सम्मान एवं आदिवासी महापंचायत भी आयोजित की जाती है। इस महापंचायत में समाज में व्याप्त कुरीतियों, समस्याओं का निदान कैसे और किस रूप में हो सकता है? इस पर समाज के शीर्ष सामाजिक कार्यकर्ताओं, सामाजिक जनप्रतिनिधियों की अगुवाई एवं मार्गदर्शन में विचार विमर्श किया जाता है। जिसमें आम आदिवासी भी सम्मिलित होते हैं।

वीर मेला में छत्तीसगढ़ के अलावा अन्य प्रांतों से भी आदिवासी समाज के लोग शिरकत करते हैं। वीर मेला में प्रदेश सरकार के मंत्रियों की भी उपस्थिति होती है। प्रतिवर्ष सरकार द्वारा आदिवासियों की समस्याओं बात की जाती है। समस्याओं के निदान हेतु घोषणा भी की जाती है। बावजूद इसके आदिवासियों की समस्याएं, उनका दर्द समाप्त होते दिखाई नहीं देता। बल्कि, उनमें इजाफा होते नजर आता है। आदिवासियों को तमाम संवैधानिक अधिकार प्रदत है। पर भी, सुविधाएं गायब है।

वीर मेला में आदिवासी महापंचायत में वर्ष २०18 /२०19 एवं २०२०/२१ में क्रमशः 16, 34, 46 एवं 56 बिंदुओं पर आधारित समस्याएं समाज द्वारा रेखांकित किया गया है। जो सचमुच ही चिंतनीय है, सरकार और समाज दोनों के लिए। छत्तीसगढ राज्य बनने के बाद सरकार में चाहे वह भाजपा या कांग्रेस की हो आदिवासी विधायकों की संख्या सर्वाधिक रही है। लेकिन, उनके द्वारा समाज की समस्या को प्रमुखता से रखने का साहस नहीं किया जाता। शायद यही वजह है, कि समाज के लोगों को अपनी मांगों, अधिकारों के लिए सड़क पर उतरना पड़ता है। जबकि, छत्तीसगढ़ राज्य देश के दूसरे राज्यों की तुलना में बेहद समृद्ध है, जहां भी आदिवासी निवासरत है। प्राकृतिक खनिज संसाधनों

का विपुल भंडार है। जिसे सत्ता में आने वाली चाहे कोई भी सरकार हो, उन प्राकृतिक संसाधनों को लूटने की तरह तरह की तरकीबें सोचती और निकालती रहती है। जिसके कारण आदिवासी समाज और सरकार के मध्य टकराहट और तकरारें होती रहती है। बीते कुछ सालों से छत्तीसगढ़ में आदिवासियों की संख्या को घटाकर बताया जा रहा है, ताकि संख्या के अनुरूप आरक्षण देना ना पड़े! दरअसल, भाजपा एवम् कांग्रेस दोनों ही दल भयभीत है कि कहीं आदिवासी मुख्यमंत्री ना बन बैठे। एक तरह से आदिवासी समाज इसे राजनीतिक षड्यंत्र का हिस्सा मान रहे है। जिस तरह से परिसीमन आयोग के जरिए परिसीमन कराया गया जिसमें आदिवासियों की संख्या ३२ फीसदी है, इसे आधार मानकर विधायकों के लिए २९ सीट तय कर दी गई है। वही ३२ फीसदी आरक्षण के लिए २००६ से २०१२ तक आदिवासी समाज पूर्ववर्ती भाजपा सरकार के छलावा के खिलाफ लगातार आंदोलन करने सड़क पर उतरते रहे हैं, अंततः सरकार को ३२% आरक्षण देने बाध्य होना पड़ा था।

जिसे वतर्मान में माननीय उच्च न्यायालय बिलासपुर के द्वारा घटाकर २०% कर दिया गया है। क्योंकि सरकार द्वारा अनुसूचित जनजाति समुदाय की वास्तविक स्थिति को हाई कोर्ट के समक्ष प्रस्तुत करने में नाकाम रहे। न्यायालय के इस फैसले से आदिवासी समुदाय का आरक्षण काफी हद तक प्रभावित हो रहा है। इसके विरोध में आदिवासी समाज सरकार के खिलाफ लगातार पूरे प्रदेश भर में धरना प्रदर्शन कर रहे हैं । जबकि कांग्रेस को आदिवासी समाज के लोगों ने सर आंखों पर उठाते हुए सर्वाधिक विधायक दिए हैं, कि कांग्रेस सरकार आदिवासी हितों की रक्षा करेगा! लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ । देखा जाए तो इस मुद्दे (३२ प्रतिशत आरक्षण) पर भाजपा \कांग्रेस की खामोशी समझ से परे है। इससे भाजपा कांग्रेस का दोगलापन साफ नजर आ रहा है। बात बस्तर की हो, चाहे छत्तीसगढ़ या भारत के किसी भी आदिवासी क्षेत्र की हो प्रमुख समस्यायें एक समान है। और वह है जंगल पर आधिपत्य के। इस प्रश्न पर आदिवासियों एवं सरकार के मध्य टकराहट होती रहती है। तथ्य है कि सभ्य समाज पहले उनकी जमीन छीनी और उन्हें पहाड़, जंगल की ओर ढकेल दिया। फिर वहां से भी धकेला जा रहा है, कारण है कि मूल्यवान प्राकृतिक खनिज संपदा आदिवासी ही बचा कर रखे हुए हैं। स्वतंत्रता के बाद आदिवासियों के प्रगति, विकास और राष्ट्रीय हित के नाम पर स्वाधीन भारत में अनेकों विकास की योजनाएं बनाई गई, जिससे कुछ लाभ जरूर आदिवासियों को मिला, मगर अभी भी शोषण और विस्थापन के दर्द से मुक्ति नहीं मिल पाई है । और यही शोषण का क्रम आदिवासियों को संघर्ष के लिए उकसाता रहता है। इतिहास अपने को दोहराता है, यदि आज भी बस्तर एवं अन्य स्थानों के आदिवासियों के विद्रोह से सबक नहीं लिया तो विस्फोटक स्थिति के लिए तैयार रहने होंगे। नए राज्य की स्थापना के साथ बस्तर अंचल में भी आशा की नई किरण जगी थी। लेकिन, अनुपातिक विकास आज पर्यंत नहीं हो सका। वही राज्य बनने के बाद नक्सलियों के नाम पर निहत्थे, भोले भाले निर्दोष आदिवासीयों को जेलों में बंद कर दिया गया है, फर्जी मुठभेड़ की कई मामले सामने आ चुके हैं। जांच में मामले प्रमाणित होने के बाद भी सरकार द्वारा दोषियों पर कार्रवाई नहीं की जा रही है। दूसरी ओर परियोजना के नाम पर सैंकड़ों आदिवासियों को विस्थापन का दंश झेलना पड़ रहा है, जिसका एक बड़ा उदाहरण सलवा जुडूम है। शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क, पानी और बिजली अभी भी आदिवासी क्षेत्र की गंभीर समस्या बनी हुई है। इस तरह अनेकों समस्याएं हैं और समाधान नहीं हो रहा है। इसे विडंबना है कहा जा सकता है।

वीर मेला का आयोजन महज मनोरंजन के लिए ही आदिवासी समाज द्वारा नहीं किया जाता बल्कि , वतर्मान समाज को अपने पुरखे की इतिहास का बोध कराना, आत्मबल बढ़ाना, सांस्कृतिक पुनरुत्थान के साथ शहीद वीर आदिवासियों की वीरता शूरता की गाथा को नई पीढ़ी तक पहुंचाने का जतन किया जाता है। वीर मेला महज छत्तीसगढ़ में ही नहीं, अपितु पूरे देश में जाना जाने लगा है। जल, जंगल, जमीन की सुरक्षा के लिए आदिवासी समाज के लोग विभिन्न परियोजनाएँ जो लंबित है उनका मुआवजा लेने तक से इनकार कर दिया है, उनका कहना है कि उनके आराध्य वन देवी देवताओं को कौन बचाएगा। क्योंकि जंगल ही आदिवासियों का जीवन है। लेकिन वन पर, वन विभाग का आधिपत्य है। हालांकि, आजादी के पश्चात आदिवासियों के जीवन यापन, जीवन शैली पर विचार-विमर्श का दौर चला लेकिन, किसी सटीक निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा गया। जिसका आशय है आदिवासियों की जीवन शैली को अनावश्यक ना बदला जाए। सरकार को चाहिए कि आदिवासी की छटपटाहट को, उसकी पीड़ा को, उसकी व्यथा कथा को, समझे, जाने, उन्हें उससे मुक्ति दिलाने का निष्कपट प्रयास करें। यह एक पीड़ादायी से है कि आम आदिवासी विद्यमान व्यवस्था से संतुष्ट नहीं हैं, जिन्हें प्राथमिकता के आधार पर दूर करने होंगे। वीर मेला के महापंचायत में आदिवासियों की समस्याएं 56 बिंदुओं पर पाई गई है, लेकिन इन 10 सालों में उन 56 बिंदुओं में समाहित समस्याएं कितनी कम हो पाई है , यह तो समाज के सिर्फ सामाजिक कार्यकर्ता, जनप्रतिनिधि ही बता पाएंगे! बहरहाल वीर मेला का यह आयोजन संगठनात्मक तौर पर समाज को सुदृढ़ बनाए जाने का आयोजन है।

वीर मेला के इस शानदार ऐतिहासिक 10 साल के सफर में छछ्ड लोक असर परिवार आदिवासी समाज के संघर्ष और धैर्य को सलाम करता है।

अभी मैंने गीत गाया ही कहां था...

प्रस्तुति -मक्सिम आनंद

रवीन्द्रनाथ मर रहे थे। एक बूढे मित्र आये और उन्होंने कहा, अब मरते वक्त तो भगवान से प्राथर्ना कर लो कि अब दोबारा जीवन में न भेजे। अब आखिरी वक्त प्राथर्ना कर लो कि अब आवागमन से छुटकारा हो जाये। अब इस ख्वाब, इस गंदगी के चक्कर में न आना पड़े।

रवीन्द्रनाथ ने कहा, क्या कहते हैं आप? मैं और यह प्राथर्ना करूं? मैं तो मन ही मन यह कह रहा हूं कि हे प्रभु, अगर तूने मुझे योग्य पाया हो, तो बार—बार तेरी पृथ्वी पर भेज देना। बड़ी रंगीन थी, बड़ी सुन्दर थी; ऐसे फूल नहीं देखे, ऐसा चांद, ऐसे तारे, ऐसी आंखें, ऐसा सुन्दर चेहरा! मैं दंग रह गया हूं! मैं आनन्द से भर गया हूं। अगर तूने मुझे योग्य पाया हो तो हे परमात्मा, बार—बार इस दूनिया में मुझे भेज देना। मैं तो यह प्राथर्ना कर रहा हूं मैं तो डरा हुआ हूं कि कहीं मैं अपात्र न सिद्ध हो जाऊं कि दोबारा न भेजा जाऊं।

रवीन्द्रनाथ को बूढ़ा बनाना बहुत मुश्किल है। शरीर बूढ़ा हो जायेगा। लेकिन इस आदमी के भीतर जो आत्मा है, वह जवान है, वह जीवन की मांग कर रही है।

रवीन्द्रनाथ ने मरने के कुछ ही घड़ी पहले, कुछ कड़ियां लिखवायी। उनमें दो कड़ियां हैं। देखा तो मैं नाचने लगा! क्या प्यारी बात कही है! किसी मित्र ने रवीन्द्रनाथ को कहा कि तुम तो महाकवि हो, तुमने छह हजार गीत लिखे, जो संगीत में बांधे जा सकते है! शेली को लोग पश?चिम में कहते हैं, उसके तो सिर्फ दो हजार गीत संगीत में बंध सकते हैं, तुम्हारे तो छह हजार गीत! तुमसे बड़ा कोई कवि दुनिया में कभी नहीं हुआ।

रवीन्द्रनाथ की आंखों से आंसू बहने लगे।

रवीन्द्रनाथ ने कहा क्या कहते हो, मैं तो भगवान से कह रहा हूं कि अभी मैंने गीत गाये कहां थे, अभी तो साज बिठा पाया था और विदा का क्षण आ गया। अभी तो ठोक—पीटकर तंबूरा ठीक किया था सिर्फ, अभी मैंने गीत गाया ही कहां था। अभी तो मैंने तंबूरे की तैयारी की थी, ठोक—पीटकर तैयार हो गया था।

जंगो रायतार विद्या केतुल के संस्थापक शेर सिंह आचला लगे हैं कोया पुनेम संस्कृति को संजोने में

गणतंत्र के बादआदिवासी जीवन शैली में काफी परिवर्तन आया है। गायता एवं पुरानी पीढ़ी भी 1960 के आते-आते बिखराब की ओर उत्तरोत्तर बढ़ता गए। आर्यन कल्चर को देखते देखते आदिवासी समाज में भी बदलाव आते गया।

हमारा भारत दुनिया के उन चुनिंदा देशों में एक है, जहां आज भी आदिम संस्कृति न सिर्फ जिंदा है, बल्कि उसका प्रचार प्रसार में भी उल्लेखनीय कार्य हो रहा है। अपनी महान संस्कृति को संजोये आदिवासी समाज वक्त के साथ कदम से कदम मिलाकर निरंतर आगे बढ़ने को प्रयासरत हैं। वहीं अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए सरकार से भी लड़ने लड़ाने में कुशल नेतृत्व करने वाले सामाजिक कार्यकर्ता, चिंतकों की कमी नहीं है। प्राकृतिक संपदा से भरपूर छत्तीसगढ़ आदिवासी बहुल राज्य है। यहां आदिवासियों की विभिन्न जातियां निवास करती हैं। इनमें गोंड और हल्बी प्रमुख है। जनसंख्या की दृष्टि से गोंड सबसे बड़ा आदिवासी समुदाय है। वैसे तो यह राज्य के सभी अंचलों में निवास करते हैं परंतु दक्षिण क्षेत्र बस्तर में इनकी बहुलता है।

गोंड जनजातियां अपने सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण समझी जाती हैं। इनकी समृद्ध विरासत पर अनेकों शोध किए जा चुके हैं। इसी विरासत को संजोने और आने वाली पीढ़ी तक पहुंचाने के लिए छिहत्तर वर्षीय शेर सिंह आचला सक्रिय भूमिका आज भी निभा कर रहे हैं। उनके स्वयं के संग्रहालय में पाषाण कालीन, मध्यपाषाण कालीन, उत्तर पाषाण कालीन से लेकर आधुनिक युग से संबंधित पुरातात्विक धरोहर है। दमकसा स्थित संस्थान में गोंडवाना का ध्वज फहराया जाता है प्रतिदिन दादा आचला से मिलकर पुरातत्व, पर्यावरण एवं जैव विविधता से ओतप्रोत जानकारी शोधार्थी प्राप्त कर सकते हैं। सेवानिवृत शिक्षक श्री आचला कांकेर जिला के दुर्गकोंदल ब्लॉक स्थित दमकसा गांव के रहने वाले हैं। जबतक शिक्षक की नौकरी में रहे छात्रों को किताबी बातों के साथ-साथ मौलिक और नैतिक शिक्षा का भी ज्ञान देते रहे। इनसे शिक्षा प्राप्त किए बहुत से छात्र आज सरकारी सेवा में पहुंच कर न सिर्फ अपने समाज बल्कि क्षेत्र का नाम रौशन कर रहे हैं।

एक नजर

पूरा नाम शेर सिंह आचला पिता स्वर्गीय पितो राम आचला एवम् माता बुटी बाई आचला , ग्राम दमकसा तहसील व विकासखंड दुगुर्कोंदल (उत्तर बस्तर जिला कांकेर) में निवासरत है। जन्म सन 1946, शिक्षा उच्च प्राथमिक उत्तीर्ण। वे 1954 में चौथी जमात उतीर्ण कर लिए थे। बियाबान जंगल होने के कारण 16 किलोमीटर दूर भानूप्रतापपुर पढ़ने नहीं जा सके थे। इसके चलते 2 वर्ष तक पढ़ाई में व्यवधान रहा, लेकिन उनके पिताजी 2 सालों में स्कूल की पढ़ाई भूल गए हैं यह मानकर उन्हें 1956 में भानुप्रतापपुर में पुनः पहली कक्षा में दाखिला करवा दिए। जबकि चौथी बोर्ड की परीक्षा तो पहले पास कर लिया था। वहां रहकर उन्होंने पांचवीं बोर्ड की परीक्षा एवं 1964 में आठवीं बोर्ड की परीक्षा उत्तीर्ण किया । तत्पश्चात और 1964 में ही सोनादाई पहाड़ी में लकड़ी कटाई के काम में मजदूरी करने लगे। उनके पढ़ाई से प्रभावित होकर जगदलपुर के वन विभाग के रेंजर ने उन्हें रोजगार कार्यालय में पंजीयन करवाने का सलाह मशविरा दिया और उस साक्षात्कार में पास हो, उसी वर्ष 1964 में कोयलीबेड़ा विकासखंड में

स्कूल खुला जहां अध्यापकीय कार्य करने लगे और गोंडी पढ़ाना शुरू किया। जो लगातार जारी था। उसी दरमियान 1972 में भोपाल के अनुसंधान कार्यशाला में उनका चयन किया गया। वे 2008 में शिक्षककीय कार्य से सेवानिवृत्त हुए ।उसके बाद से वे अपना पूरा जीवन पर्यावरण संरक्षण संवर्धन के साथ ही गोंडी भाषा लिपि को पाठ्यक्रम में शामिल करवाने जुड़ गए। लोक असर के बेबाक बातचीत स्तंभ में उन्होंने कुछ सवालों के जवाब देते हुए आदिवासी परंपरा, संस्कृति से संबंधित है कुछ विशेष जानकारी दी है, जिसे हम पाठकों के लिए यहां पर वीर मेला विशेषांक में खास तौर पर प्रकाशित कर रहे हैं।

☛ आपकी नजर में परब (त्यौहार) क्या है और आदिम साहित्यकार इसे किस रूप में देखते हैं। एवं वर्तमान में परब, संस्कृति, रीति रिवाज कितना विकृत हो चुकी है और इसे कैसे बचाया जा सकता है ?

❑ उन्होंने बताया कि परब का अर्थ है वर्ष में सामूहिक रूप में हनु (तीज त्यौहार) मनाया जाने वाला पर्व है। हरियाली अमावस्या के समय हनु का पर्व प्रारंभ होता है, जिसमें सेवा अर्जी (गोंगो) किया जाता है। इसके बाद फागुन में पतझड़ आता है जिसमें पलाश, सेमल का फूल आते हैं तब रंग गुलाल का चलन नहीं था। पलाश सेमल के फूल से रंगोत्सव किया जाता था। जब पुनर पुष्प प्रारंभ होता था, उसी समय क्षेत्र में आमा जोगानी, मौहा जोगानी त्यौहार गांव में गायता के माध्यम से सामूहिक रूप से मनाया जाता है। दक्षिण बस्तर में फसल पकने के बाद यह त्यौहार मनाया जाता है। जब तक फसल पूरी तरह से नहीं पक जाती , तब तक गांव के गायता एवं घर का पुजारी उसे नहीं खाते, यह रिवाज अब भी कायम है। मरका पहाना हनु कहते हैं । वैशाख में तीज त्यौहार के रूप में अक्ति से शुरू किया जाता है, जिसे वैशाख उगोना कहते हैं। जहां से गांव ठाठना (बिजलिंग) बीज बोने के पूर्व गांव की जिमेदारीन, आजकल इनको शीतला कहते हैं। तलुरमुत्ते को ठाकुरदाई कहते हैं छत्तीसगढ़ में। इसे महाराष्ट्र में मराय चेरू कहा जाता है। इस तरह से अलग-अलग प्रांतों में गोंडवाना भूभाग में फैले हुए क्षेत्रों में हनु पर्व मनाये जाने का चलन है। पहली बार विश्व आदिवासी दिवस के अवसर पर दुनिया के आदिवासियों को एक मंच पर आने का मौका प्राप्त हुआ, जिसमें बस्तर छत्तीसगढ़ के आदिवासी भी एकजुट हुए। विश्व आदिवासी दिवस छत्तीसगढ़ में 2011 से मनाया जा रहा है इसकी शुरूआत इंडोर स्टेडियम रायपुर में पहली बार मनाया गया। हनु या परब को पंडूम के रूप में मनाने का प्रचलन आ रहा है।

आजादी के पहले गायता, पुजारी समाज के कर्णधार रहे हैं। बस्तर , छत्तीसगढ़, तेलंगाना महाराष्ट्र, झारखंड आदि राज्यों में जो यथावत जनश्रुतियों के माध्यम से दादा परदादा से परब मनाने की परम्परा आती रही है । गणतंत्र के बादआदिवासी जीवन शैली में काफी परिवर्तन आया है। गायता एवं पुरानी पीढ़ी भी 1960 के आते-आते बिखराब की ओर उत्तरोत्तर बढ़ता गए। आर्यन कल्चर को देखते देखते आदिवासी समाज में भी बदलाव आते गया। उन्होने बताया कि आदिवासी समुदाय में पहले राखी नहीं बांधते थे, तीजा पोरा नहीं होता था, किंतु वर्तमान में अब यह सब होने लगा है। आदिवासी अपनी मूल अवस्था को कम मानने लगे हैं। इस भांति रहन-सहन में काफी बदलाव आया है। पुनजार्गृति की ओर विश्व आदिवासी दिवस के माध्यम से अब आदिवासी समाज में साहित्य प्रचार होने लगा है, ताकि नई पीढ़ी को पुनर्वापसी के लिए जागरूक किया जा सके। जिसमें जन्म संस्कार, मृत्यु संस्कार, विवाह संस्कार को पुरातन पद्धति में लाने का प्रयास सामाजिक बुद्धिजीवी कर रहे हैं।

☛ **गोटूल प्रथा क्या है और विलुप्त होती इस परंपरा को कैसे बचाया जा सकता है?**

❑ इस प्रश्न के जवाब में आचला जी बताते हैं कि गोटूल एवं गोंडी की उत्पत्ति का जिक्र होता है कचारगढ़ के नाम से, लेकिन हमारे छत्तीसगढ़ में गुफा के रूप में किल्लेकोड रच्चा परमासुर गोटूल आज भी विद्यमान है। पाषाण कालीन युग से 10000 साल से लिंगो ने इसे शुरू किया था। बस्तर में, नारायणपुर में , अबूझमाड़ में, अंतागढ़ में गोटूल व्यवस्था यथावत आज भी देखने को मिलता है। जहां पेन पुरुड पाट पुरखा गुरु ज्ञान की संपूर्ण शिक्षा उस गोटूल में मिलता था। जिसमें युवा से लेकर वृद्धजन तक अनेकों विषयों जैसे गीत, संगीत, नृत्य, परंपरा, कथा कहानियां जनश्रुतियों के

माध्यम से दिए जाने का केंद्र था। वर्तमान में भी है । शुरूआत में पाहन्दी पारी कुपाल लिंगो और उनके 33 कोट शिष्यों के बीच शुरू ज्ञान की पाठशाला घोटूल विद्यालय से ही प्रारंभ होकर बस्तर में मानवीय परंपरा, संस्कृति का संबंध रहा है। आजादी के बाद लोग शिक्षित होते गए और बाहर के लोगों के आवागमन, तालमेल की वजह से गोटूल को उपेक्षित दृष्टि से, हेय दृष्टि से देखने लगे । गोटूल की मुख्य विषय बिंदु से हटकर उल्लेख लोग करने लगे और धीरे-धीरे नतीजा यह हुआ कि सामाजिक लोग भी नकारात्मक भाव से गोटूल को देखने लगे और गोटूल बंद होते चले गए। परंतु अब पुनजार्गृति और आदिवासी समाज में जागरूकता आने लगी है और उस गोटूल शिक्षा पद्धति को पुनःस्थापित करने की प्रस्तावना की जा रही है। अब गोटूल को शासन प्रशासन ने भी एक मान्यता के तहत निर्माण हेतु बस्तर संभाग के विशेष गोटूल क्षेत्रों में अथवा उन जिलों में पुनः भवन निर्माण के लिए 10 लाख की राशि देखकर निर्माण करवा रहे हैं। कई स्थानों पर बनाया जा चुका है, किंतु उस परंपरागत व्यावहारिक शिक्षा जैसे नृत्य, गीत, संगीत, 18 वाद्य कला एवं नियम पालन जो प्राचीन काल में था उसका सही सदुपयोग और अनुपालन नहीं हो रहा है, जो की चिंता का विषय है।

☛ गोंडी साहित्य को लेकर आपके लक्ष्य क्या है?

❑ गोंडी साहित्य के संबंध में उन्होंने बताया कि पहले गोंडी मौखिक वाचन में प्रयोग होता रहा है , जिसे लिखित साहित्य में लाने का कई लेखकों द्वारा प्रयास किया गया, जिसमें मोती रावण कंगाली की तरह साहित्यकार , पत्रकार, लेखक, संपादक अनेकों ने इस कार्य में अपना योगदान दिया है। किंतु पाठ्य पुस्तकों में गोंडी को समाहित करने के लिए छत्तीसगढ़ में मैंने 1973 से एक प्रयास किया है। और 2006 में पाठ्य पुस्तकों के लिए पठन सामग्री के लिए राज्य शैक्षिक अनुसंधान प्रशिक्षण संस्थान रायपुर में प्रथम बार पहली से पांचवी तक पाठ्य पुस्तकों की लेखन के लिए मुझे निर्देशित किया गया । जिसका परिणाम है, कि कांकेर क्षेत्र के लिए 2008 2009 में कोयलीबेड़ा, अंतागढ़, पखांजूर, दुगुकोंदल विकासखंड की प्राथमिक शाला में प्रायोगिक तौर पर गोंडी में पठन-पाठन का कार्य प्रारंभ हुआ है और अब तक निरंतर जारी है। किंतु, खेद का विषय है कि अधिकांश शिक्षक गोंडी भाषी नहीं होने के कारण स्थानीय बोली की पाठ्यक्रम को नहीं पढ़ा पा रहे हैं। अभी हम गोंडी की मौलिक पहचान, परंपरा, संस्कृति एवं शिक्षा को पुनः जागृत करने के लिए एक स्थाई केंद्र के रूप में और स्वावलंबन के रूप में स्थापित करने का मेरा स्वयं का लगन रहा है । शासकीय सेवा में रहते हुए सन 1973 से इस और चिंतनशील था किंतु, उस समय सामाजिक संगठन के अभाव में मेरी सोच होने के बाद भी क्रियान्वयन नहीं हो पाया था। जब बस्तर संभाग का गठन हुआ और गोंडवाना समन्वय समिति बस्तर संभाग का गठन एवं पंजीयन हुआ तदुपरांत प्रथम बार 1990 में सिंगनपुर (कोंडागांव)में गोंडी विद्यापीठ स्थापित किया गया। उस कार्य में सामाजिक प्रमुखों के साथ मेरा भी योगदान बौद्धिक रूप में हुआ करता था। उसी तारतम्य में मैंने वर्ष 1992 में सामाजिक सम्मेलन के बीच एक प्रस्तावना पहली बार ग्राम जबराटोला, तहसील, मानपुर पानाबरस (वर्तमान मानपुर मोहला चौकी जिला) क्षेत्र में एक राष्ट्रीय गोंडवाना गोंड महासभा के तीन दिवसीय सम्मेलन जिसमें महाराष्ट्र के बुद्धिजीवी भी आए हुए थे एवं अरविंद नेताम, देवलाल दुग्गा आदि जनप्रतिनिधि भी सभा में उपस्थित थे वहां पर पहली प्रस्तावना मेरे द्वारा रखी गई थी। तत्पश्चात 1992 में जबलपुर के मदन महल पठार में अखिल गोंडवाना गोंडी साहित्य परिषद का सम्मेलन 7, 8 एवम् 9 मई को आयोजित था जिसमें अपनी उपस्थिति के साथ ही गांव के तत्कालीन गायता दाऊ

राम दुग्गा और भज्जू राम दुग्गा के साथ कठिन परिस्थितियों में भी वहां पहुंचा और अपने उद्बोधन में यह विषय जंगो रायतार विद्या केतुल शिक्षण संस्थान की स्थापना एवं उसके लिए 5 एकड़ भूमि की घोषणा किया था। जिसका सभी ने समर्थन किया था । तब से मोतीरावण कंगाली जी, शीतल मरकाम जी, सुनहेर सिंह तारम जी, हीरा सिंह मरकाम जी सहित समाज के राष्ट्रीय स्तर के बुद्धिजीवियों, सामाजिक कार्यकताओं एवं साहित्यकारों से मेल मुलाकात और परिचय हुआ। उसी प्रस्ताव में 1 जून 1992 को प्रारंभ किया जाना है, जिसमें सभी को निमंत्रण दिया था और वहां से वापसी के पश्चात स्थापना की तैयारी में जुट गया और 1 जून 1992 से मुख्य अतिथि शिवराज सिंह उसारे भरीटीला के सामाजिक कार्यकर्ता के मुख्य आतिथ्य में इसका शुभारंभ हुआ। इसके बाद तब से निरंतर पर्यावरण को लेकर जैव विविधता संरक्षण एवं जड़ी-बूटी के संरक्षण, संवर्धन का कार्य के साथ-साथ गोंडी भाषा की पाठ्य पुस्तकों को संस्था के माध्यम से पठन-पाठन के लिए संग्रहालय की स्थापना की गई है। वर्ष 2009 से 2013 तक आश्रम का संचालन स्वयं की जीपीएफ से मिली छह लाख की राशि से किया जाता रहा है। उसी दरमियान क्षेत्र के वैद्य, बैगा, सिरहा गुनिया संघ की स्थापना के लिए 14 जनवरी 2010 से लेकर कार्यक्रम आयोजित किया जाता रहा है और अब भी निरंतर प्रक्रिया जारी है। वैद्य संघ का गठन तो हुआ । लेकिन, स्थाई पंजीयन के अभाव में वैद्य संघ को समर्पित एवं पंजीयन किया हुआ भूमि आज पर्यंत हस्तांतरण नहीं हो पाया है। जबकि 1994 में कन्या आश्रम हेतु 1 एकड़ भूमि का भी दान दिया गया उसका पंजीयन हो गया है । वहां कन्या आश्रम बन चुका है। सामुदायिक भवन और गोटूल का निर्माण शासकीय निधि से हो चुका है। संगठन का एकीकरण नहीं होने के कारण समाज का ध्यान इस ओर नहीं जा पा रहा है। जंगो रायतार विद्या केतुल के सदस्यगण हैं वह भी किसी प्रकार से इसमें सहयोग नहीं कर पा रहे हैं। किंतु, नैसर्गिक पर्यावरण शिक्षा निकेतन, ज्ञान बाड़ा दमकसा के नाम से एवं जंगो रायतार विद्या केतुल शिक्षा संस्थान का पंजीयन 2007 में रायपुर से

किया जा चुका है। जिसका पंजीयन क्रमांक 16011/ 2007 से एक पंजीकृत संस्था के रूप में स्थापित है। इसी संस्थान के मार्गदर्शन में अलग पंजीयन के माध्यम से जंगो रायतार इंग्लिश मीडियम स्कूल सरोना (नरहरपुर) में संचालित है । वहां का भी संरक्षक हूं। उसी प्रकार बस्तर संभाग के कोंडागांव जिला के ग्राम मसोरा पखांजूर एवं चारामा में इसी संस्थान के मार्गदर्शन में जंगो रायतार विद्या केतुल की स्थापना की गई है। इसके अलावा सेमरगांव (अंतागढ़) में भी स्थापना की गई है।

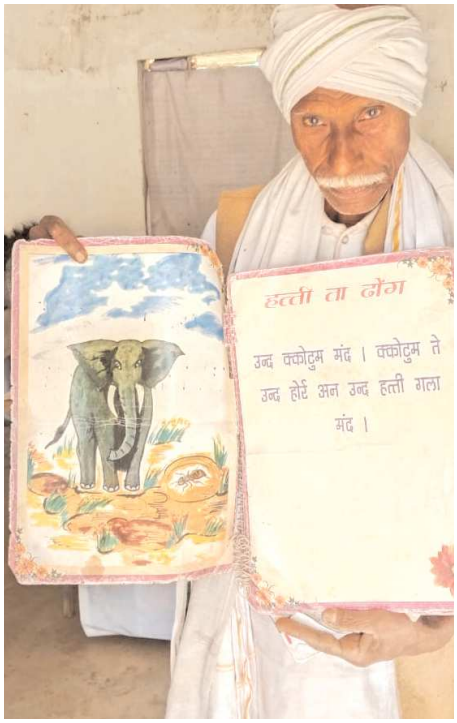

☛ पर्यावरण के क्षेत्र में आगे क्या करने की चाहत है?

❑ पर्यावरण के क्षेत्र में शिक्षकीय काल से ही कई सम्मान प्राप्त है। 2004 में पर्यावरणविद की उपाधि से सम्मानित किया गया है। शिक्षा के क्षेत्र में अनेक उपलब्धियां मिल चुकी है। जंगो रायतार विद्या केतुल संस्थान दमकसा में प्रतिवर्ष 5 जून को पर्यावरण दिवस, 24 मार्च को जल दिवस , 22 अप्रैल को पृथ्वी दिवस एवम 22 मई को जैव विविधता दिवस मनाते हुए निरंतर जन जागरूकता के कार्य में संलग्न हूं। सादगीपूर्ण जीवन जीने वाले शेर सिंह आंचला छत्तीसगढ प्रदेश के गोंडी धमार्चार्य भी हैं। इसके साथ साथ वह एक कुशल वैद्य भी हैं और जड़ी-बूटी के माध्यम से कई गंभीर रोगों का सफल इलाज भी करते हैं। दमकसा स्थित इनके आश्रम में विभिन्न प्रजाति के दुलर्भ वनस्पतियां मिल जाती हैं। इलाके में उप स्वास्थ्य केंद्र मौजूद होने के बावजूद कई बार लोग प्राकृतिक इलाज के लिए इन्हीं के पास आते हैं। दूसरे आदिवासी समुदाय की तरह गोंड भी पर्यावरण प्रेमी होते हैं और इन्हें देवी देवता का स्थान देते हैं। पर्यावरण संरक्षण के प्रति इनकी चिंता को इसी से समझा जा सकता है कि गांव वाले वनों की सुरक्षा का जिम्मा स्वयं संभालते हैं और प्रति परिवार एक पेड़ की रक्षा करता है। यदि किसी भी अनावश्यक कारणों से उसने पेड़ काटा तो पूरी पंचायत उसे सजा सुनाती है। सजा के तौर पर उसे एक पेड़ के बदले दस पेड़ लगाने होते हैं। पर्यावरण सरंक्षण के लिए शेर सिंह आचला भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में उनके इस अविस्मरणीय कार्य के लिए राज्य सरकार ने रायपुर में एक भव्य कार्यक्रम में उन्हें प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित भी किया है। गुरु-शिष्य की परंपरा को बखूबी निभाते हुए श्री आचला सेवानिवृत हुए। सेवा से मुक्त होने के बाद इन्होंने अपना जीवन गोंडी भाषा और संस्कृति के उत्थान के लिए समर्पित कर दिया है। श्री आचला कहते हैं कि उन्होंने गोंडी समाज की विलुप्त होती संस्कृति, गोटुल प्रथा, बोली, भाषा और महोत्सव के प्रचार-प्रसार को ही एकमात्र लक्ष्य माना है। इसके लिए उन्होंने दमकसा में ही एक ऐसे आश्रम का निर्माण किया है जहां गोंडी समाज के युवक-युवतियों को समुदाय के इतिहास और संस्कृति से परिचित कराया जाता है।

गौरतलब है कि गोंडी समाज की संस्कृति भारतीय संस्कृति का ही आईना है। जहां अतिथि को देव के समान सम्मान दिया जाता है। पश्चिमी सभ्यता के विकार के बावजूद आज भी इस समाज के लोग मेहमानों का स्वागत उनका पैर धोकर और तिलक लगाकर करते हैं। शिव सिंह आंचला का कहना है कि उन्होंने कभी भी पश्चिमी अथवा ऐसी किसी शिक्षा का विरोध नहीं किया जो मनुष्य के ज्ञान का विकास करता है। बल्कि उनका प्रयास रहता है कि

... **शेष पृष्ठ 14 पर**

भारत में अगर किसी समुदाय ने सबसे ज्यादा दमन झेला है तो वे आदिवासी हैं

हकीकत यह है कि प्राकृतिक संसाधन जहां कहीं भी हैं, वहीं आदिवासी रहते हैं। तो अगर प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा करना है तो आदिवासियों को वहां से हटाना पड़ेगा। लेकिन आदिवासी को हटा कर भेजा कहां जाय? अब जमीनें तो बची नहीं हैं, जहां नये गांव बसाये जा सकें।

हिमांशु कुमार

भारत के ब्राह्मणी ग्रंथों में जिसे देव-दानव संग्राम कह कर गरिमा प्रदान की गई है, असल में वह बाहर से आने वाले आर्यों का आदिवासियों के साथ क्रूर युद्ध का वर्णन है।

अगर इन तथाकथित धर्म ग्रंथों को पढेंगे अथवा इनके आधार पर बनने वाले टीवी धारावाहिकों या फिल्मों को देखेंगे तो आप पायेंगे कि उनमें जिन्हें दानव, राक्षस या असुर कहा गया है वे आदिवासी हैं।

इन ब्राह्मणी धर्मग्रंथों में असुर दानव अथवा राक्षस काले रंग के होते हैं। वे जोर-जोर से हंसते हैं। उनकी स्त्रियां स्वतंत्र होती हैं। उनके सींग होते हैं। उनकी नाक मोटी होती है

आज भी आदिवासी सींग लगा कर नाचते हैं। सवर्ण आर्यों के मुकाबले आदिवासी स्त्रियां अधिक स्वतंत्र होती हैं। आदिवासियों की नाक आम तौर पर आर्यों के मुकाबले मोटी तथा रंग अमूमन काला या सांवला होता है

ब्राह्मणी ग्रंथों में देव-दानव युद्धों का वर्णन पढ़िऐ उसमें लिखा गया है कि देवताओं के हमलों से राक्षस भागने लगे। उनकी स्त्रियों के गर्भ गिर गए। उनके गांव जला दिए गये। उनका समूल नाश कर दिया गया।

असल में यह भारत के मूल निवासियों के साथ हुए युद्धों का वर्णन है। इन युद्धों में जो पकड़ कर गुलाम बना लिए गये, वे दलित कहलाये और उन्हें निम्न श्रेणी का काम करने के लिए मजबूर किया गया और अलग बस्तियों में अछूत बनाकर रखा गयो इनकी जमीनों पर आर्यों तथा अन्य हमलावर कबीलों

का कब्जा हो गया। इसीलिये आज भी अस्सी प्रतिशत दलित भूमिहीन हैं। जो मूलनिवासी बचकर जंगलों में जाकर रहने लगे, वह आदिवासी बने रहे। भारत की जातियां दरअसल युद्धों का परिणाम हैं और अलग-अलग जातियां अधिकांशतः अलग अलग नस्लें हैं। भारत का जातिवाद भी एक तरह का नस्लवाद है।

आजादी के बाद नेहरु आदिवासियों के प्रति संवेदनशील थे। उन्होंने आदिवासी इलाकों में राज्य के आवश्यकता से अधिक हस्तक्षेप से मना किया था। उनका मानना था कि हम आदिवासियों के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य सहूलियतों की व्यवस्था कर दें, लेकिन उनके जीवन और संस्कृति में हस्तक्षेप ना करें।

इंदिरा गांधी तक इस नीति पर चलती रहीं। लेकिन जब नब्बे के दशक में नई आर्थिक नीतियां लागू हुईं तथा उदारीकरण, निजीकरण व वैश्वीकरण का दौर शुरू हुआ तब सबसे बड़ा हमला आदिवासियों पर ही हुआ।

असल में इस नई आर्थिक नीतियों के दौर में अमीर देशों की पूंजी गरीब देशों की तरफ दौड़ने लगी। लैटिन अमेरिकी देश अफ्रीकी देशों, फिलीपींस और दक्षिण एशिया इस पूंजी के निशाने पर थे। असल में यह आवारा पूंजी दुनिया-भर के प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा करने के लिए दौड़ लगा रही थी।

इसलिए, जहां कहीं भी प्राकृतिक संसाधन थे, वहां यह पूंजी जा रही थी। दुनिया भर के नेता पूंजीपतियों को अपने देश के प्रकृतिक संसाधन बेचने को अपनी सफलता और उपलब्धि बताने लगे। आज भी हमारे प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी गर्व से कहते हैं कि हम हजारों-लाखों करोड़ का विदेशी निवेश लेकर आये हैं।

जिन देशों की इस पूंजी को आने नहीं दिया गया, वहां पूंजीवादी देशों ने युद्ध थोप दिऐ अमेरिका की अगुआई में तेल के क्षेत्रों और खनिज प्रचुर इलाकों में अन्तर्राष्ट्रीय संयुक्त सेनाएं भेजी गईं और हमें बताया गया कि हम वहां लोकतंत्र की स्थापना कर रहे हैं।

हकीकत यह है कि प्राकृतिक संसाधन जहां कहीं भी हैं, वहीं आदिवासी रहते हैं। तो अगर प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा करना है तो आदिवासियों को वहां से हटाना पड़ेगा। लेकिन आदिवासी को हटा कर भेजा कहां जाय? अब जमीनें तो बची नहीं हैं, जहां नये गांव बसाये जा सकें। तो इस कारण सरकारें अब आदिवासियों के पुनर्वास के पचड़े में पडती ही नहीं हैं। सरकार अब सुरक्षाबलों का इस्तेमाल करके आदिवासियों को जबरन उस इलाके से खदेड़ देती है। कुछ ही समय पहले छत्तीसगढ़ में भाजपा सरकार ने सलवा जुडूम के नाम से ऐसा ही एक व्यापक अभियान चलाया था। इस अभियान में सरकार ने आदिवासियों के साढ़े छह सौ गावों में आगजनी की और हजारों आदिवासियों की हत्याएं, महिलाओं पर अत्याचार व उनका यौन शोषण तथा निर्दोष आदिवासियों को जेलों में ठूंसने का अभियान चलाया था। आज भी आदिवासी इलाकों में जेलें आदिवासियों से भरी हुई हैं। झारखंड के सामाजिक कार्यकर्ता रहे फादर स्टेन स्वामी ने तीन हजार आदिवासियों की सूची प्रकाशित की थी, जिनकी जेल में ही मौत अभी हाल की ही घटना है।

आदिवासियों के दमन और उनके मानवाधिकारों की आवाज उठाने के कारण सोनी सोरी को भाजपा सरकार ने पुलिस थाने में ले जाकर बिजली के झटके दिए और उनके गुप्तांगों में पुलिस अधीक्षक ने पत्थर भरवा दिए। सोनी सोरी के भतीजे और आदिवासी पत्रकार लिंगा कोड़ोपी के गुदा में मिर्च में डुबाया हुआ डंडा घुसा दिया गया, जिससे उनकी आंत फट गई। और फिर उन्हें भी जेल में डाल दिया गया।

भारत के संविधान में आदिवासियों को विशेष संरक्षण दिया गया है। कोई भी कानून आदिवासियों के पांचवी और छठवीं अनुसूची इलाकों में ज्यों का त्यों लागू नहीं हो सकता। लेकिन जब झारखंड और छत्तीसगढ़ के आदिवासियों ने संविधान की यही बात पत्थर पर लिख कर अपने गावों के बाहर लगा दी तो झारखण्ड और छत्तीसगढ़ की सरकार ने आदिवासियों पर राजद्रोह के मामले बना दिए और उन्हें जेलों में डाल दिया।

गौर तलब है कि संविधान में भारत के राष्ट्रपति को आदिवासियों का संरक्षक नियुक्त किया गया है। लेकिन आजादी के बाद से आज तक किसी भी राष्ट्रपति ने आदिवासियों का दमन होने पर अपने उस अधिकार का इस्तेमाल नहीं किया। यहां तक कि जब आदिवासियों के सैंकड़ों गांव जलाये गये अथवा सोनी सोरी की गुप्तांग में पत्थर ठूंसे गये, तब भी राष्ट्रपति ने कुछ नहीं किया। इसे विपरीत सोनी सोरी को प्रताड़ित करने वाले अधिकारी को राष्ट्रपति द्वारा वीरता पुरस्कार दिया गयो

यह कोई एक राज्य का मामला नहीं है। बिहार के कैमूर में आदिवासी महिलाओं को जेल में ठूंस दिया जाता है। उड़ीसा के नियमगिरि में वेदांता के लिए पूरे पहाड़ को सीआरपीएफ द्वारा घेरा गया था। झारखंड में सारंडा को बर्बाद कर दिया गया। टाटा के लिए पश्चिम बंगाल के

नंदीग्राम और सिंगुर में लोगों के घर जलाये जाते हैं। 2 जुलाई, 2006 को उड़ीसा के कलिंगनगर में 13 आदिवासियों की हत्या कर दी जाती है और पुलिस पर आरोप है कि लाश उनके परिवारों को देने से पहले उसने उनके पंजे काट लिये, जो आज भी दफनाये नहीं गये हैं, क्योंकि आदिवासियों को पता ही नहीं है कि कौन सा पंजा किसका है। भारत के मानवाधिकार आयोग ने भी यह माना है कि बस्तर की कम से कम सोलह आदिवासी महिलाओं के पास प्राथमिक साक्ष्य मौजूद हैं कि उनके साथ सुरक्षाबल के जवानों ने बलात्कार किया है।आदिवासियों पर इतना सरकारी दमन और हमले होने के बाद भी भारत के राष्ट्रपति, सर्वोच्च न्यायलय संसद या तथाकथित मुख्य धारा मीडिया को कोई फर्क नहीं पड़ता।आज भी भारत के अर्द्धसैनिक बल के सिपाही कहां हैं? वे आदिवासी इलाकों में हैं। वे वहां क्या आदिवासियों को सुरक्षा देने गये हैं? नहीं वे वहां प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा करने गये हैं। किसके लिए कब्जा किया जा रहा है? क्या इस देश के गरीबों की गरीबी दूर करने के लिए? नहीं बल्कि पूंजीपतियों के लिए।

यह संसाधनों पर कब्जे के लिए लड़ा जा रहा एक युद्ध है। कापोरेट के फायदे के लिए लड़ा जाने वाला यह युद्ध नए इलाकों में फैलता जा रहा है। अब इसकी चपेट में किसान और मजदूर भी आ गये हैं। मजदूर की पूरी मजदूरी की मांग को दबाने के लिए भी सैनिकों का इस्तेमाल किया जाता है और किसान के खिलाफ भी। आपको आश्चर्य नहीं होना चाहिए अगर कुछ समय के बाद पंजाब, हरियाण और उत्तर प्रदेश के गावों में भी छत्तीसगढ़ और झारखंड की तरह सीआरपीएफ की टुकड़ियां दिखाई देने लगें।

फॉरवर्ड प्रेस के लिए
(संपादन : नवल/अनिल)

क्यों उपेक्षित है आज भी वीर नारायण सिंह की शहादत

लेखक /शंकर गुहा नियोगी

सोनाखान के वीर शहीद नारायण सिंह की जन्मभूमि एवं कर्मभूमि और वर्तमान में क्रांति तीर्थभूमि, सोनाखान जाकर उनके परिवार से मुलाकात करने की जिम्मेदारी संस्था की ओर से मुझे एवं सहदेव साहू को सौंपी गयी। सोनाखान वर्तमान में छत्तीसगढ़ के पूर्व की ओर, रायपुर जिले की तहसील बलौदा बाजार (वर्तमान में जिला) में स्थित है। जंगलों के बीच एक आदिवासी बहुल गांव है। कंवर, धनहार, बिंझवार एवं गोंड़ जाति के लोग इस बस्ती में रहते हैं। सोनाखान पंचायत भी है। सोनाखान पंचायत में भूसरी पाली, कसोन्दी, महकम, बंगलापाली गांव है।

(इसी इलाके में) यह वही कसडोल है जहां के व्यापारियों के विरुद्ध सन् 1856 में शहीद वीर नारायण सिंह ने घोर संघर्ष किया था। आज आजादी के 32 साल बाद [स्मारिका का प्रकाशन 1979 में हुआ था] भी वीर नारायण सिंह के परिवार के लोग नितान्त गरीबी में दिन व्यतीत कर रहे हैं, परन्तु वह व्यापारी घराना जिसने शहीद नारायण सिंह के सपनों को चकनाचूर करने के इरादे से वीर नारायण सिंह को कारागार में पहुंचा दिया था, आज भी कसडोल में गगनचुम्बी इमारत बनाकर इठला रहा है।

गांव के पश्चिम में स्थित एक छोटा सा पहाड़ है। पहाड़ का नाम कुरूपाट डोंगरी है। यह वही डोंगरी है जहां वीर नारायण सिंह "कुरूपाट देवता की पूजा करते थे।" कुरूपाट की विशेषता यह है कि वहां एक छोटी सी जगह पर बारहों महीने पानी मिलेगा। पहाड़ी के ऊपर कुरूपाट के पास का वह स्थल बड़ा ही मनोरम बड़ा सुन्दर है। कुरूपाट, बिंझवार जमींदार के राजदेवता हैं।

कुरूपाट डोंगरी में ही वीर नारायण सिंह ज्यादा समय रहते थे। उनके पास एक कबरा [चितकबरा] घोड़ा था। वो अक्सर घोड़े पर सवार होकर गांव-गांव घूमा करते थे। किसानों के दुख-दर्द सुना करते थे, समस्याओं का हल बताते थे और उनकी यथाशक्ति मदद भी किया करते थे। आज भी बहुत से लोग कहते हैं कि उन्होंने अब भी वीर नारायण सिंह को [चित]कबरे घोड़े पर सवार होकर घूमते हुए देखा है।

वीर नारायण सिंह डरपोक आदमी को सहन नहीं करते थे। और अगर कोई व्यक्ति क्रांतिकारी वीर के पास आकर रोना-गाना करता था कि मुझे फलां बदमाश साहूकार ने सताया है, तो वे नाराज हो जाते थे एवं भुरकुट्टी ढेंकी में उसे सजा देते थे। और अगर कोई आकर उनसे ये कहता कि मैंने फलां बदमाश को मार भगाया, या किसी अंग्रेज अफसर को चांटें रसीद करे [किए] हैं तो ये सुन कर नारायण सिंह खुश हो जाते और खुशी से, उस आये हुए व्यक्ति की पीठ ठोंकते और ईनाम भी देते थे।

[सन् 1979 में आज जहां बस्ती बनी हुई है। पुरानी बस्ती वहां नहीं थी । बस्ती तालाब से लगी हुई थी। महकम बस्ती एवं सोनाखान बस्ती एक साथ लगी हुई थी। अंग्रेजों ने 1857 के दिसम्बर महीने में इन्हीं दो बस्तियों के ऊपर हमला एवं अत्याचार किया था। यह इतिहास और वीर नारायण सिंह की वीरतापूर्ण संघर्ष का इतिहास, इतिहासकारों के विश्वासघात के बावजूद एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को मालूम होता रहा और यह सिलसिला शताब्दियों तक चलता रहेगा। अंग्रेजों ने इस बस्ती को तीनों ओर से घेर कर आग लगा दी थी और बस्ती के बच्चों को पकड़ कर दहकते हुए अंगारों में डाल दिया था। अंधाधुंध गोली चलाकर सैकड़ों लोगों को मौत के घाट उतार दिया था तथा बलात्कार जैसे कुकर्म भी करने से नहीं चुके। बस्ती खाली हो गई। गांव के लोग दूर-दूर तक जंगल और पहाड़ों को पार करते हुए भाग खड़े हुए थे। परन्तु गांव के लोग उन अत्याचारों को महत्व नहीं देते हैं। वे वीर नारायण सिंह के संघर्ष को ही याद करते हैं। आज की पीढ़ियों में भी वह दुख, घृणा और गुस्से में परिवर्तित होकर रह गया है।

अंग्रेजी साम्राज्यवाद के मुनीम-कसडोल के साहूकार परिवार, जिनके पास वीर नारायण सिंह

(शहीद शंकर गुहा नियोगी द्वारा लिखे गए इस लेख को पुन: प्रकाशित करने का हमारा एक मकसद यह है कि आज की युवा पीढ़ी उस संघर्ष को जाने और समझे, जो आज से 161 वर्ष पहले छत्तीसगढ़ के इलाकों में चल रहा था। उनका संघर्ष ब्रिटिश हुक्मरानों की साम्राज्यवादी नीतियों, स्थानीय सामंतों व साहूकारों के शोषण के खिलाफ था सम्पादक)

अकाल के दिनों में गरीब किसानों के लिए अनाज मांगने गये थे, जिन साहूकारों के खिलाफ वीर नारायण सिंह ने संघर्ष किया था, वही मिश्र परिवार के लोग आज भी काले अंग्रेजों की तरह हैं। साम्राज्यवाद के मुनीम बनकर कांग्रेसी राज्य [सन् 1979 में सत्तारूढ़ सरकार चला रहे हैं। वही साहूकार परिवार के लोग आज भी राजसत्ता पर कब्जा किए हुए हैं। इन परिवार के लोगों ने वीर नारायण सिंह का नाम मिटा देने की जी-तोड़ कोशिश की।

बहुत बार ग्रामवासियों की तरफ से मांग करने के बावजूद भी एक बांध के लिए सरकार ने दो लाख रुपया पास नहीं किया। नारा सिंह के गांव से आज भी बदला लिया जा रहा है। परन्तु बाकी क्षेत्र में पानी के बन्दोवस्त के लिए प्लान बनाये जा चुके हैं।

[वीर नारायण सिंह के जमाने में जानवर मारने में कोई मनाही नहीं थी [वीर] नारायण सिंह खुद शिकार खेलते थे. पूरी बस्ती के लोग हांका में जाते थे। शिकार में जो भी प्राप्त होता था, उसमें हांका में जाने वाले व्यक्तियों का बराबर का हिस्सा होता था।

वीर नारायण सिंह की जरूरत है क्या? मेरे इस प्रश्न पर गांव वालों की आंखों में एक नई चमक उठी और कहने लगे हो अब हमनला वीर नारायण सिंह बने बर लगही। हमन एक्को दिन वीर नारायण सिंह बन जांबो। जंगल में एक पंछी फड़फड़ाते हुए बोल उठता टिं -टिं -टिं -टिं

मिसिर तोर का गति होही।
सरकार तोर का गति हो ही।।
वीर नारायण सिंह आही।
वीर नारायण सिंह आही।।

[वीर] नारायण सिंह के पूर्वज गोंड़ जाति के थे। बताया जाता है कि इनके पूर्वज सारंगढ़ के जमींदार के वंश के हैं। गोंड़ मारू के डर से इनके पूर्वजों ने गोंड़ से बिंझवार जात में जाति परिवर्तन किया।

बताया जाता है कि [वीर) नारायण सिंह के पूर्वज सारंगढ़ में [से]आए 'विशाही ठाकुर' सोनाखान जमींदारी वंश के पूर्वज थे। फते नारायण के समय में अंग्रेजों का कब्जा नहीं हो पाया था। [वीर] नारायण सिंह के पिता का नाम राम राय था। नारायण सिंह के पास करीब 70 गांव का कब्जा था।

[उन दिनों] अंग्रेजी साम्राज्यवाद देशी राजा व जमींदारों के ऊपर भरोसा नहीं कर पा रहा था। यह वर्ग था महाजन वर्ग। साहूकारों ने अंग्रेजों की मेहरबानी से समूचे देश में अपना जाल बिछा दिया। जमाखोरी, ब्याज का धन्धा आदि से साहूकार वर्ग के लोग दिन दुगुना रात चौगुना बढ़ते गये। पहले गांव में अनाज जमा रहता था। परन्तु इन साहूकार वर्गों के चलते अनाज गायब होने लगा। सूखे की आड़ लेकर साहूकार वर्ग भयंकर शोषण करते थे। महाजन (साहूकार) वर्ग के आते ही गांव-गांव में अकाल पड़ने लगे एवं गरीब किसान भूख से तड़फने लगे। कसडोल का मिश्र परिवार भी महाजन परिवार था। ऊपरी भाग के मेहनती हरिजन (सन् 1987 तक इस शब्द का उपयोग अनुसूचित जाति के लोगों के लिए किया जाता था। परंतु बाद में इसे प्रतिबंधित कर दिया गया है) (सतनामी) किसान जमीन में मेहनत कर सोना जैसे धान उगा रहे थे, दूसरी तरफ जंगली क्षेत्र में भोले भाले कंवरगोंड बिंझवार, धनवार आदि आदिवासी जंगल की उपज और खेत खलिहान के धान आदि पर जिन्दा थे। (सोनाखान इलाके में मिश्र परिवार ने) महाजनी धंधा जोर से शुरू किया। ब्राह्मण होने के नाते इस परिवार को स्वीकृति मिली, इससे शोषण के जाल फैलाने में इनको काफी मदद मिली, उपज होते ही मिश्र के आदमी सस्ती कीमत में अनाज खरीद लिया करते थे। इन्होंने ब्याज का धंधा चालू किया, बैल, बर्तन एवं जमीन जायदाद भी गिरवी में रखकर चक्रवृद्धि ब्याज के धंधे के जरिये बहुत जल्द ही यह परिवार इस क्षेत्र में अव्वल नम्बर का शोषक बन गया।

1856 में उस क्षेत्र में भयंकर सूखे के कारण अकाल पड़ा। जंगल के जानवर भी सूखा पड़ने से जंगल छोड़कर भाग गये। पहाड़ी क्षेत्र में कंदमूल भी मिलना दूभर हो गया। सोनाखान राज के लोग अनाज के बिना त्राहि-त्राहि करने लगे। सोनाखान में [वीर नारायण सिंह की बैठक में सब एकत्रित हुए करें ?" और सब एक आवाज में बोल उठे "कैसे करें?

अंग्रेज कमिश्नर इलियट और स्मिथ थे। कसडोल के मिश्र परिवार के ऊपर अंग्रेजों की कृपा दृष्टि थी। सोनाखान की बैठक में तय हुआ कि कसडोल के महाजन मिश्र परिवार से कर्ज के बदले अनाज मांगा जाये। कुछ ब्याज भी दिया जायेगा। वैसे बताया गया कि मिश्र परिवार के लोगों के मुंह से अकाल की समस्या देखते ही पानी निकल रहा था। अकाल की स्थिति में ज्यादा ब्याज व अधिक मुनाफे के लालच में, मिश्र परिवार ने [वीर] नारायण सिंह की बात पर अनाज देने से साफ इंकार कर दिया। परंतु कोई हल नहीं निकला। महाजन के कोठे में रखा अनाज सूखने लगा और जनता का पेट भी बिना अन्न के सूखता रहा। सोनाखान स्थित [वीर) नारायण सिंह की बैठक में गांव के मुखिया जुटते गये। नारायण सिंह बोले- नहीं, भूख से कोई आदमी नहीं मरेगा भले ही लड़ाई के मैदान में जूझते प्राण क्यों न चले जायें। [वीर] नारायण सिंह ने उपस्थित लोगों से पूछा क्यों तुम लोग लड़ने को तैयार हो या नहीं। जवाब में उपस्थित लोग एक स्वर में बोल पड़े, लड़बोन लड़बोन और ये आवाज इतनी तेज थी कि सारे पहाड़ी इलाकों में तथा जंगलों में यही आवाज गूंजने लगी, तथा गांव-गांव में पहुंचने लगी। लोग सोनाखान पहुंचने लगे। कुरूपाट में [वीर] नारायण सिंह का डेरा था। कुरूपाट का पानी पीकर सरदारों ने शपथ ली कि अब हम साहूकारों को सहन नहीं करेंगे। साहूकारों की कोठी के अनाज में आदिवासी किसानों की मेहनत का खून लगा हुआ है। लहू पसीने की कमाई से पैदा हुआ अनाज महाजन की कोठी में भरा हुआ रहेगा और हम भूख से तड़फते रहेंगे, ये कभी नहीं हो सकता। नारायण सिंह की आवाज कुरूपाट में व आसपास के क्षेत्र में गूंजने लगी।

1856 का साल था। [वीर] नारायण सिंह अपने [चितकबरे घोड़े पर सवार होकर नेतृत्व सम्हाला। लोगों के साथ [वीर] नारायण सिंह कसडोल पहुंचे, फिर एक बार कसडोल के ब्राह्मणों से कर्ज के रूप में अनाज मांगा। मिश्र लोगों ने अंगूठा दिखा दिया। [वीर नारायण सिंह से अब सहा नहीं गया। कोठी के धान को [बीर] नारायण सिंह ने जब्त कर लिया और ग्रामवासियों के बीच जरूरत के आधार पर बांट दिया। सन् 1856 साल की यह घटना एक क्रांतिकारी घटना थी। आर्थिक मांगों पर अनाज के लिए संघर्ष की जो मिसाल छत्तीसगढ़ के दूर एवं दुर्गम गांवों में [वीर] नारायण सिंह ने

गांव के पश्चिम में स्थित एक छोटा सा पहाड़ है। पहाड़ का नाम कुरूपाट डोंगरी है। यह वही डोंगरी है जहां वीर नारायण सिंह "कुरूपाट देवता की पूजा करते थे।" कुरूपाट की विशेषता यह है कि वहां एक छोटी सी जगह पर बारहों महीने पानी मिलेगा। पहाड़ी के ऊपर कुरूपाट के पास का वह स्थल बड़ा ही मनोरम, बड़ा सुन्दर है।

शुरू की उसकी मिसाल इतिहास में दुर्लभ है। यह था जनता के लिए, जनता द्वारा संग्राम, जिसका नेतृत्व किया था सोनाखान के आदिवासी नेता वीर नारायण सिंह ने । [वीर] नारायण सिंह ने अंग्रेज शासकों को बाद में खबर भी दे दी। व्यापारी मिश्र ने भी अपनी क्षति

का पत्र डिप्टी कमिश्नर को भेजा।

अंग्रेज कमिश्नर इलियट ने व्यापारी का भेजा हुआ शिकायत पत्र प्राप्त होते ही एक फौज की टुकड़ी के साथ [वीर] नारायण सिंह के नाम से वारन्ट भेज दिया। परन्तु फौजी टुकड़ी धोखा देकर ही [वीर] नारायण सिंह को रायपुर ले जाने में सफल हुई। 1857 साल सारे देश में सिपाही गदर की आग जल रही थी। वे मौका पाकर जेल से भाग निकले फिर सोनाखान ।

[वीर] नारायण सिंह को अनाज लूटने के आरोप में बन्दी बनाया गया था। सोनाखान चुप नहीं बैठा था। सोनाखान और 18 गांव के आदिवासी किसान गुस्से से तमतमाते रहे। जब [वीर] नारायण सिंह आ गये तो गांव-गांव के आदिवासी अपने नेता को देखकर खुशी में दृढ़ निश्चय के साथ फिर संगठित हुए। विद्रोह का नगाड़ा गांव-गांव में बजने लगा।

बैठक हुई [वीर नारायण सिंह के नेतृत्व में लोगों ने अंग्रेजी साम्राज्यवाद के खिलाफ फिर से संग्राम के लिये इरादा बनाया। छत्तीसगढ़ के इतिहास में आदिवासियों के टपकते खून का इतिहास, देश को मुक्त करने का इतिहास, मुक्ति संघर्ष की शुरूआत का इतिहास। अंग्रेज भी चुप नहीं बैठे। उन्होंने भी अपनी तैयारियां की।

कुरूपाट डोंगरी में चढ़कर जब तक वीर नारायण सिंह की फौज की बन्दूक गरजती रही, अंग्रेज फौज की टुकड़ी को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा।

यात्रा के दौरान एक गांव में जब शंकर गुहा नियोगी लोगों से वीर नारायण सिंह के बारे में पूछ रहे थे। एक आदिवासी अधेड़ व्यक्ति (कंवर) बोल उठा, मैं बताऊंगा 'लड़ाई की कहानी' विभीषण बिना रावण को हराना मुश्किल था, उसी प्रकार जमींदार घरानों ने वीर नारायण सिंह को दगा दिया। किसान युद्ध की पीठ में चाकू भोंका, एकमात्र सम्बलपुर के क्रांतिकारी सुरेन्द्र सहाय को छोड़ कर बाकी सभी जमींदारों ने अंग्रेजों का साथ दिया। [यहां तक कि] [वीर] नारायण सिंह के सगे बहनोई ने भी [वीर] नारायण सिंह के एवं किसान युद्ध के दुश्मन ज्यादा ताकतवर नहीं थे, परन्तु जमींदारों के विश्वासघात के कारण इतने बड़े संघर्ष को पराजय झेलनी पड़ी।

[शंकर गुहा नियोगी से एक स्थानीय निवासी। गजपाल सिंह बोले- 'कौन जानता है क्या था? पर उसकी बात बिल्कुल सत्य है कि अकाल पीड़ित किसानों के लिए अनाज दिलाने हेतु संघर्ष में उन्होंने पहले नेतृत्व दिया था। जेल तोड़ने के पश्चात वीर नारायण सिंह ने सिपाही गदर के समय एक तरफ अंग्रेजों का राज खत्म करने का विचार ठान लिया था। साथ-साथ साहूकार वर्ग के खिलाफ, तीव्र घृणा के कारण, कोटगढ़ एवं खरीद जाकर मिश्र परिवार के लोगों को खत्म कर नये संघर्ष की शुरूआत की थी। सिर्फ बच गई थी मिश्र परिवार की एक गर्भवती महिला और साथ में उसका एक पुत्र ।

[यात्रा में] साथी सहदेव ने फिर पूछा- 'कुरूपाट की आखिरी लड़ाई का क्या हुआ ?' उदास होकर मुच्चु बोला- अंग्रेज सिपाहियों के साथ लड़ते-लड़ते वीर नारायण सिंह की गोला बारुद खत्म हो गई।

आधुनिक शस्त्रों के साथ देहाती शस्त्रों का मुकाबला न हो सका। वीर नारायण सिंह पकड़े गये । उनको पकड़ कर एक साथी के साथ अंग्रेज लोग उनके ही कबरे घोड़े पर बैठाकर रायपुर ले गये।

चलते-चलते मैंने [शंकर गुहा नियोगी] गजपाल सिंह से प्रश्न किया 'सोनाखान में कब से सोना पाया जाता है ?' गजपाल सिंह उत्तर में बोले- यह भी तो बहुत दिन की बात है। अपनी वंशावली का एक कागज आपको गोलमरां में दिखाऊंगा जिसमें लिखा है कि सोनाखान गांव का पुरातन नाम सिंघगढ़ था। सिंघगढ़ से सिंहखान एवं वर्तमान में सोनाखान बना। रातों रात सफर कर जब हम रायपुर पहुंचे तो सूर्योदय की लालिमा पूर्व गगन में उदित हो रही थी। सूरज की किरण [रायपुर के] जय स्तम्भ चौक के ऊपर पड़ी। इसी जय स्तम्भ के पास ही [वीर] नारायण सिंह का उबलता हुआ गरम खून गिरा था, देश की मुक्ति के लिये। आज यह जनपथ है, रोज लाखों लोग आना-जाना करते हैं। क्या ? [उन्हें इसका अहसास है ?]

(साभार फारवर्ड प्रेस संपादन गोल्डी नवल सिद्धार्थ इमानुद्दीन)

पृष्ठ 5 का शेष

जंगो रायतार विद्या केतुल के संस्थापक शेर सिंह आचला...

गोंड समाज की युवा पीढ़ी आधुनिक शिक्षा में भी पारंगत हो, परंतु इसके लिए अपनी परंपरागत संस्कृति की बलि देना जरूरी नहीं है। उन्होंने कहा कि 'गोंडी भाषा और संस्कृति की पहचान मिटती जा रही है। जिसे बचाना मैं अपना प्रथम कर्तव्य समझता हूं।' इसके लिए वह इस पूरे क्षेत्र में रथ यात्रा निकालकर अलख जगाने का कार्य कर रहे हैं। उन्होंने गोंड समाज की पूज्यनीय और भाषा की जननी देवी जंगो रायतार के नाम पर 'जंगो रायतार विद्या केतुल' की स्थापना की है। पांच एकड़ में बनी एक प्रकार की नर्सरी उनकी निजी भूमि थी, जिसे उन्होंने समाज के लिए समर्पित कर दिया।

यहां विविध प्रकार के दुलर्भ पेड़-पौधे, वनस्पतियां, कंकड़-पत्थर और जड़ी-बूटियों का सरंक्षण और उत्पादन किया जाता है। इस कार्य के लिए श्री आचला और उनके परिवार ने अपनी ओर से करीब सात लाख रुपए भी खर्च किए हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने वन पर्यावरण को बढ़ावा देने के लिए 'अंतराष्ट्रीय दिव्य ज्ञान शोध संस्थान एवं ज्ञान मणि शिक्षा द्वीप विलक्षण विद्यालय' की स्थापना का भी विचार कर रखा है। जहां आदिवासी समाज के देवी देवताओं और वनों की महत्ता में दिलचस्पी रखने वालों को प्रशिक्षित किया जाएगा।

उन्होंने कहा कि आदिवासी पर्यावरण मित्र रहे हैं क्योंकि वह सदैव पेड़ों-पत्थरों और वनों को अपना भगवान मानते हैं। परंतु पिछले कुछ वर्षों से इन क्षेत्रों में तेजी से हो रही वनों की कटाई इस बात का प्रमाण है कि आदिवासी जीवनदायी अपने भगवान को भूल रहे हैं। शिव सिंह आंचला अपने सपने को मूर्त रूप देने के लिए कई स्तरों पर कार्य को अंजाम दे रहे हैं।

जिस उम्र में जब दूसरे सेवानिवृत होकर घर में आराम करते हैं ऐसे में समाज और पर्यावरण के प्रति श्री आचला के प्रेम और सेवा को देखकर यही कहा जा सकता है। कि वह 76 वर्षीय युवा हैं।' आगे बढ़कर दूसरों को मंजिल दिखाने का जज्बा रखने वाले श्री आचला को सरकार से कोई शिकायत नहीं है। उन्हें चिंता इस बात की है किस तरह आने वाली पीढ़ी के लिए पर्यावरण को संरक्षित किया जाए। राजनीति से उनका दूर तक कोइ नाता नहीं है नही कोई लगाव है। वे तमाम आधुनिक शिक्षा के साथ नवीन पीढ़ी को बिना अपनी मूल अवस्था खोए हुए प्रत्येक क्षेत्र में आगे देखना चाहते हैं।

आंगादेव यानी क्या?

साल के वनों के बीच बस्तर के आदिवासियों के अनेक देवी-देवता हैं। जिसमें आंगादेव का सबसे विशिष्ठ स्थान है। आंगा किसी भी देव के प्रतीक चिन्ह के रूप में बनाया जाता है। आंगा देव अन्य देवों से इस मायने में अलग है क्योंकि इसकी मृत्यु भी होती है। एक क्षेत्र विशेष के आगा देव अपने क्षेत्र के आदिवासियों के अटूट श्रद्धा के केन्द्र होते है। इनके लिए बकायदा पेनस्थल बना होता है। जहां मनौतियां मानी जाती है। जैसे निःसन्तान दम्पति सन्तान हेतु विशेष कर अच्छी फसल प्राप्ति हेतु मनौती मांगी जाती है। सुकाल व दुकाल के संबंध में ग्रामीणों के प्रश्नों के उत्तर आगादेव उचित माध्यम से देते है। उचित माध्यम किसी भी प्रकार का हो सकता है। देवता किसी सिरहा के शरीर में प्रवेश कर उसकी वाणी के माध्यम से उत्तर देते हैं। चोरी, डकैती, जादू टोना संबंधी प्रश्न पूछे जाते हैं और उनके द्वारा दिये गये उत्तरों को अकाट्य माना जाता है। दोनों ही पक्ष उक्त निर्णय को मानते है।

आंगादेव का इतिहास

केवल बस्तर ही एक ऐसा क्षेत्र है जहां की जनजातियों के द्वारा अपने देवताओं को लकड़ी के "आंगा" प्रतीक के रूप में बनाया जाता है। आंगा देव के इस रूप के निर्माण के पीछे भी एक तथ्य जुड़ा हुआ है कि सदियों से बस्तर, गोंडो की कर्मभूमि रही है। जहां से उनके देवताओं को भी प्रसिद्ध मिली है। यही उसेहमुदिया कि उत्पत्ति से संबंधित किवदंति भी कही जाती है। सदियों पूर्व दक्षिण बस्तर में तुलार पर्वत की श्रृंखला में एक पर्वत स्थित है। इस पर्व चोटी पर समतल एक बहुत बड़ी चट्टान है। इस चट्टान पर आंगा जैसी आकृति प्राकृतिक रूप से बनी हुई है, जिसे यहां की माडिया जनजातियों ने देवता मानकर पूजा आराधना प्रारंभ की। यह कई पीढ़ियों तक चलता रहा, किन्तु पहाड़ की चढाई दुर्लभ होने के कारण वहां बार-बार जाना संभव नहीं था। अतः गांव के बुजुर्गों ने विचार किया कि उसकी किसी लडकी से वैसी ही आकृति बनाकर गांव में भी पूजा की जाये। इसके पश्चात आदिवासियों ने पूर्ण विधी- निशेधों के साथ आंगा को आकृति प्रदान की। उसे देव का नाम रखा गया 'हिड़तोहरोप्पा बुजुर्गों द्वारा आंगा के निर्माण की प्रक्रिया को बच्चे भी उत्सुकता से देख रहे थे। बच्चों ने भी बुजुर्गो द्वारा निर्मित बची हुई लकड़ी से उसी विधी-विधान के साथ खेल-खेल में आंगा तैयार किया और उसे जंगल में छुपा दिया। इसके पश्चात बच्चे देव जात्रा खेला करते थे। यह खेल वर्षों तक चला। इस प्रक्रिया में बच्चों ने बुजुर्गों का अनुसरण किया। बुजुर्ग मुर्गे कि बलि दिया करते थे, किन्तु बच्चों के लिए मुर्गा उपलब्ध होना सीव नहीं था सो बच्चे "उसी चिडिया" जंगल से पकड़कर बलि देने लगे। इसलिए उस देव का नाम बच्चों ने उसेह मुदिया रखा। इसी प्रक्रिया में बच्चों ने एक दिन जात्रा करने के बाद बुजुर्गों का अनुसरण कर बकरे की बलि खेल-खेल में देने का विचार किया और एक बच्चे को बकरा बनाया और उसे कहा कि वह बकरे की बलि-खेल में देने का विचार किया और एक बच्चे को बकरा बनाया और उसे कहा कि वह बकरे की आवाज निकाले। बच्चों ने पूजा प्रक्रिया सम्पन्न कर घास की तलवार बनाकर बलि देने का उपक्रम किया, जिससे उसे बच्चे की वास्तव में बलि हो गई. इससे उपस्थित सभी बच्चे डरकर भाग गये। गांव से एक बच्चा गुम हो गया, इसका हल्ला हो गया। डर के कारण किसी बच्चे ने कुछ नहीं बनाया । बच्चे के माता-पिता ने बहुत दिनों तक बच्चे को तलाश किया, किन्तु कोई जानकारी नहीं मिली। कालांतर में बच्चों का बनाया हुआ आंगा जीवन्त हो चुका था और वह शेर बनकर गांववालो को सतानेलगा। कई पालतू पशु एवं मनुष्यों को अपना शिकार बनाने लगा। तब गांव के लोगों ने मिलकर उसे मारने की योजना बनाई।

परम्परागत हथियार, तीर-धनुष्य से लैस होकर दिन रात निगरानी करने लगे। एक दिन रात में शेर गांव में आया। गांववाले पहले से तैयार थे। उसे घेरकर उस पर तीर धनुष से वार कर दिया। घायल शेर भाग गया, लोगों ने उसका पीछा किया. घायल शेर के खून के निशान को देखकर वे उस स्थान पर पहुंचे, जहां खून गिरना बंद हो गया था और वहां आंगा रखा हुआ है, जिसपर तीर गड़ा हुआ पाया गया। आज भी जब नया आंगा बनाया जाता है तो उसपर तीर के निशान अपनेआप उभर कर आते है। ग्रामीण समझ गये कि यह आंगा ही शेर बनकर लोगों को परेशान कर रहा था। गांववालों ने बच्चों को पीटने के लिए दौडाया, सभी बच्चे भाग गये। एक बच्चे के पैर में चोट होने के कारण वह भाग नहीं सका, सो वह पकड़ा गया। गांववालों ने उसे ही उस देव का पुजारी नियुक्त किया। फिर गांव के बुजुर्गों ने एक बैठक की और आंगादेव के बारे में पता किया गया कि वह देव किसका है। बहुत पूछताछ के बाद पता चला कि इस देव का निर्माण में बच्चों ने खेलने के लिए किया है। बुजुर्गों ने बच्चों पर नाराजगी व्यक्त कर उसे अपने क्षेत्र की सीमा से दूर निकाल देने को कहा तब बच्चे उस आंगा देव को अपने गांव की सीमा से दूर फेंकने ले जा रहे थे। वे जब भोरमगढ़ के जंगल पहुंचे तो आचला परिवार की महिलाएं जंगल में लकड़ी लेने गई हुई थी। महिलाओं ने जब चमकते हुए आंगा को देखा तो उत्सुकतावश बच्चों से पुछा कि यह क्या है? और उसे कहां ले जा रहे हो? तब बच्चों ने बताया कि यह देव है इसे दूर फेंकने जा रहे है। उन स्त्रियों ने कहा कि हमारे पास देव नहीं है, इसे हमें दे दो। हम लोग अपने पतियों से सलाह लेते हैं। बच्चों ने उनकी बात मान ली। गांव जाकर महिलाओं ने उस देव को खरिदने के लिए अपने पतियों को सहमत कर लिया। तब बच्चों ने बताया कि यह बदमाश देव है। शेर बनकर पशुओं और मनुष्यों को खाता है। तब उस देव को गांव में रखना ठीक नहीं समझा गया। बच्चों से आंगा को कोदो, कुटकी, महुआ आदि देकर खरीदा गया और उसे भामरागढ़ के घने जंगल के बीच मोडेमरका में स्थापित किया गया। तब से यह उसी जंगल में स्थापित है। इस प्रतिभाशाली देव को देखकर उत्तर बस्तर में महत्वपूर्ण आंगाओं का निर्माण किया गया।

आंगादेव का कार्य

आंगा देव अर्थात अंग में विराजने वाले देव हैं जो ग्राम के डायन (टोनही) चोरी, डकैती

आदि का पता लगाने में जनजातियों की मदद करता है। इसलिए आंगादेव की उपासना जनजातियों द्वारा की जाती है। कांकेर रियासत का पाटदेव भानुप्रतापपुर तहसील के ग्राम बांसला के स्थानीय शीतला माता मंदिर में स्थित बड़े पाटदेव (आंगादेव) स्व. बड़गहिन रानी शिवनंदनी देवी को दिया गया छोटे पाटदेव है। जिन्हें कांकेर रियासत के स्व. महाराजा नरहरदेव लाए थे जिनके द्वारा बिगडे गांव अर्थात जादू टोने के असर से विपदाएं आती हैं, उसे सुधारने अर्थात विपदाओं को दूर भगाने, बड़े विश्वास के साथ प्रभावित गांव में ले जाया जाता है। आंगादेव को जो चार लोग ढोते हैं वे अपनी मर्जी से नहीं बल्कि देवता की शक्तियों द्वारा चलते है। देवता की शक्ति उन्हें अपने गंतव्य की दिशा में धकियाती है। मड़ई मेले के प्रथम दिन आंगादेव अनिवार्य रूप से लाए जाते हैं।

आंगादेव का क्षेत्र

आंगादेव की उपासना बस्तर के उत्तरी क्षेत्र में अधिक होती है। इस क्षेत्र में हजारों की संख्या में आंगादेव पाये जाते है। ग्राम आंगा, परगना आंगा के साथ ही राज्य के आंगा जो आंगादेवों के प्रमुख है की कल्पना कि गई है। उसे पाटदेव कहा जाता है।

आंगादेव की मृत्यु

मुरिया, माडिया जनजातियों में मनुष्यों तरह देवताओं की भी मृत्यु होती है. किन्तु देवताओं को जलाया नहीं जाता बल्कि उसे दफनाया जाताहै ।

पाटदेव की मृत्यु

मुरिया, माडिया जनजाति परिवार में जहां पुर्नजन्म की मान्यता है, वहीं देवी देवताओं के प्रति भी यही मान्यता प्रचलित है। उदाहरनार्थ आज से डेढ़ दशक पूर्व पाटदेव मुदियाल के पुजारी जो हल्बा जाति का है उसे स्वप्न में यह संकेत मिला कि पाटदेव की मृत्यु हो चुकी है और उसका पुर्नजन्म होनेवाला है। पाटदेव का मूलस्थान टिमनार है किन्तु उस आंगा देव की शक्ति को देखकर राजा ने उसे अपने खजाने में रखवाया था इसलिए टिमनार गांव के आदिवासियों ने और पाटदेव से संबंधित विविध देवी-देवताओं के पुजारियों ने जिला प्रशासन से संपर्क किया कि पाटदेव की मृत्यु हो चुकी है और पुर्नजन्म होनेवालो है अतः पाटदेव को दिया जाये ताकि उसे हम समाधी दे सकें। जिला प्रशासन ने टिमनार वासियों को पाटदेव दे दिया, उसे जलसमाधी दी गई और बादमें पाटदेव का पुर्नजन्म हुआ। उसका शरीर बेल की लकड़ी से बनाया गया।

बस्तर में आंगादेव

बस्तर भूभाग में आंगा पाटदेव का भारी प्रताप है। जिसमें प्रमुख बड़ेपाट, पीलापाट, बाराभुजा, नरसिंहनाथ, कुडुम तुल्ला, गंगाराम, घुटाल, कोलरपाट, पाईकसरापाट, घोटपाल का उसेण्डी देव, दुगेली का इंगेहुंगादेव, अकलआरो और रायबन्डा आंगा, किरन्दुल का भूमिहिरियापाट, गंगा का नंगाभीमा, भानसी का हुरेर्मारा आंगा और कुआकोडा आंगा। भामरागढ़ में उसेहमुदिया, सेमरगांव में लिंगो, धनोरा का खण्डामुदिया और चिंगनार का बूढ़ादेव आंगा है।

पेन ठाना/हानाडुमा (पूर्वजों की आत्मा)

भारत की सभी जनजातियों में यह विश्वास है कि आत्मा का अस्तित्व शरीर के नश्ट होने के बाद भी है। मृत्यु के पश्चात भी जीवन समाप्त नहीं होता और आत्माएं बराबर विचरण करती रहती है। समय आनेपर वे उन्हीं के या निकट संबंधियों के परिवारों में नया शरीर धारण कर जन्म लेती

है। इनमें मृतात्माओं को भूला नहीं जाता अपितु उनकी पूजा की जाती है। उन्हें ये अपने आसपास महसूस करते हैं। इनका यह भी विश्वास है कि पूर्वजों की आत्माएं रोग एवं विपत्ति में अन्य दुष्टात्माओं को दूर भगाती है। जनजातियों के लिए पूर्वजों की क्रियाएं बहुत महत्वपूर्ण है। उनके धार्मिक विश्वासों में पूर्वजों की पूजा का महत्वपूर्ण स्थान है। वे लोग इस बात से सहमत हैं कि एक मनुश्य की शक्ति एवं पहुंच नियंत्रित सीमित दायरे तक है लेकिन पूर्वज पूजा के द्वारा वह उसको प्राप्त कर लेता है। वे लोग पूर्वजों के

अस्तित्व उनकी रूचि एवं सांसारिक क्रियाओं में उनके प्रवेश में विश्वास रखते है । पूर्वज उनकी जिंदगी में क्रियाशील है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि नया मृतक अपने पूर्व के मृत पूर्वजों में मिल जाता है, पूर्वजों की आत्माओं को पूकारा जाता है एवं उनकी पूजा वर्श में अवसर आनेपर की जाती है। वे यह भी विश्वास रखते है कि मृतात्मा हानि या लाभ पहुंचा सकती है पर अधिकांश जनजातियों में स्वर्ग की कोई कल्पना नहीं है। इसका सीधा कारण यह है कि जितनी प्रसन्नता व सुख अपने सादे जीवन में वे प्राप्त कर लेते है, उससे अधिक की उनकी कल्पना ही नहीं है। यही बात नक से संबंधित है। आदिवासियों की समझ के अनुसार हर गलत कार्य की एक निश्चित सामाजिक सजा है। अतः सभी कुछ इसी धरती पर निपट जाता है।

अमरता में विश्वास या मृत्यु के बाद किसी तरह का जीवन आत्मा के सिद्धान्त से जुडा हुआ है। एल्विन ने लिखा है कि बस्तर में जनजातिय मान्यतानुसार हरकी दो आत्माएं होती हैं – एक उसके मुंह में जाती है व एक शरीर में जिसे शरीर में धडकन के रूप में महसूस करते हैं। पहली आत्मा मुंह से निकलकर शोध महापूबर के पास जाती है। दूसरी मृत शरीर में है और शोक मना रहे लोगों के साथ कब्र तक जाती है। वह पास के किसी पेड पर से मृत शरीर का दहन या दफनाना देखती है फिर पास के ही किसी जलस्त्रोत में मछली के रूप में रहती है जब तक लोग आकर उसे पकड़कर घर नहीं ले आते। फिर वह घर में देव बनकर विद्यमान हो जाती है।

बस्तर के माडिया जनजाति के लोग अपने पूर्वजों के प्रति अत्यन्त श्रद्धावार होते है। वे अपनों के को दफनाते समय उसके साथ उसकी इच्छित वस्तुओं को भी समाधि में गाड़ देते है। यह मान्यता है कि मृत्यु के बाद मृतात्मा उन वस्तुओं का उपयोग करके सुखी और संतुष्ट होती है। बस्तर में सभी जनजातियां आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करती है। मुरिया जनजाति तो मृत्यु का सम्मान भी करती है। यह तथ्य उनकी परंपराओं, मान्यताओं एवं संस्कारों से स्पश्ट एवं पुष्ट होती है मृत्यु इन जनजातियों के लिए अत्यंत सहज है क्योंकि इनके बीच मरणोत्तर जीवन की मान्यता बनी हुई है। शरीर नाशवान है किन्तु आत्मा नहीं ये इस तथ्य से भली भांति परिचित है। वृद्धों की मृत्यु तो इनके बीच अत्यंत प्रसन्नता का विशय होता है, क्योंकि से मृतात्माएं ही उनके देवी–देवता है उदाहरण स्वरूप पेन्ड्रायड की गोडिन देवी, डोहला डोकरा नामक देवता की पूजा बस्तर के राजघराने में हुआ करती थी। डोहला डोकरा राजमहल में दंतेश्वरी का सेवक था। मृत्यु उपरांत वह भी देव स्वरूप हो गया। सोनाबल में मुरिया और कलार परिवारों में सोमी दामी नामक देवताओं की पूजा की जाती है। सोमी और दामी सबलपूर के दो मुरिया युवक थे। उनका प्रेम सोनाबल के एक कलार परिवार की युवतियों से हो गया। युवतियों के परिवार जनों को यह बात रास न आयी और उन्होंने एक दिन शडयंत्र पूर्वक उन दोनों भाईयों का का करवा दिया। उन्हीं दोनों भाईयों की आत्माएं देव रूप हो गयी। बस्तर के महत्वपूर्ण दशहरा पर्व में कछिन एक अछूत कन्या थी जिनकी और रैला काकतीय राजपरिवार की क्षत्रिणी। इस तरह यहां कई देवी–देवता है जो मानव ही थे और मृत्योपरांत जिनकी प्रतिस्ठा देवी–देवताओं के रूप में इस अंचल में हुई।

जब किसी मनुश्य की मृत्यु होती है तो उसे दफनाने की परम्परा है। शवों को पूरब–पश्चिम दिशा में दफनाने की परम्परा है किन्तु वह गंभीर बीमारी में मरता है या उसने मृत्यु पूर्व दाहसंस्कार की इच्छा व्यक्त की हो तो उसका दाह संस्कार किया जाता है। बुजुर्ग व्यक्ति या सम्मानित व्यक्ति की मृत्यु पर अधिक रस्में अदा की जाती है। क्रियाकर्म का कार्य मृत्यु के बाद वाले तीन दिन पांच दिन दस दिन या वह जब खर्च वहन करने में सक्षम हो जाये अर्थात एक वर्श या दो तीन वर्श भी हो सकता है। मृतक के परिवार द्वारा रिश्तेदारों को क्रियाक्रम पर बुलाया जाता है। कभी–कभी रिश्तेदारों को स्वप्न में चेतावनी मिल जाती है कि मृतक की आत्मा संतुष्ट नहीं है। उसका क्रियाकर्म शीघ्र किया जाये। निश्चित दिन सभी जमा होते है कि मृतक की आत्मा संतुष्ट नहीं है। निश्चित दिन सभी जमा होते है जिसमें अक्को, मामा और दादा भाई दोनों होते है। रात्रि भोज की व्यवस्था बेटियों की ओर से होती है। रात्रि भोज में मृतात्मा की संतुष्टी के लिए बकरे की बलि बेटियों द्वारा दी जाती है। पूर्वकाल में बकरे के स्थान पर बैल की बलि दी जाती थी। इसलिए इस बलि को किसबुडाल के नाम से जाना जाता है जिसे मृतक के परिवार ग्रहण नहीं करते। रात्रि में मृतक के सम्मान में रातभर मृत्युगीत गाये जाते है रात में बेटियों एवं बहुओं द्वारा मृतक के लिए कब्र की राह पर भोजन पहुंचाया जाता है। भोजन मिट्टी के बर्तन एवं सूखी लौकी के पात्र में लाया जाता है भोजन सात साजा की पत्तियों में दिया जाता है और बर्तनों को वहीं छोड़कर वापस आते है।

अगली सुबह वादक दल के साथ स्त्री पुरुष सभी कब्र पर जाते हैं। वहां कब्र पर मिट्टी चढ़ाई जाती है तथा ऊपर पत्थर रखकर चबूतरा बनाया जाता है। कब्र पर सभी गुलाल लगाकर शराब का तर्पण करते हैं इसके पश्चात सबसे नजदीक के नदी या तालाब में पहुंचते हैं। मृतक पति या पत्नी है तो उनसे विशेश क्रियाएं कराई जाती है। पत्नी की चूडी उतारने की क्रिया इसी दिन होती है। यह कार्य विधवा महिलाओं द्वारा किया जाता है। समधी वर्ग के लोग साजा वृक्ष की टहनियों

से एक छोटा मण्डप बनाते हैं जिस पर जामुन की पत्तियां छाई जाती है उसपर सात बार धागा लपेटकर पुजारी बैठ जाता है। वहां कलश रखा जाता है। महिला और पुरूश नहाकर उस स्थान में जल अर्पित कर हल्दी मिलाकर चावल चढ़ाते है। फिरगायता आंवला की पत्तियों से बने तीन छल्ले और एक पानी से भरा मिट्टी का घड़ा भी रखता है। मृतक के करीबी रिश्तेदार पानी में जाते हैं और मृतक को अपने पास आने को कहते है। साथ ही कोई भी जीव जन्तु पकड़ने की कोशिश करते है। जो भी पहले मेंढक या मछली पकड़ता है वह मृतक का विशेश प्यारा माना जाता है। मछली को घड़े में रख देते है और साथ में एक अंगूठी भी रखी जाती है और ढक्कन लगाया जाता है। अंगुठी का संबंध आत्मा से माना जाता है। विवाह में भी लग्न के समय दुल्हा-दुल्हन को अंगूठी पहनाता है और मृत्यु के बाद यह आत्मा मछली के रूप में रखी जाती है। उसके साथ भी अंगूठी रखी जाती है। घर पर आये रिश्तेदार बारी-बारी से उसका टीका कर पैसे चढ़ाते है है। फिर बाहर की ओर घर के पुरूष वर्ग को बिठाया जाता है। उनमें प्रमुख जिन्होंने मृतक के संपूर्ण रस्म को संपन्न किया है वह भी होता है उन्हें नये कपडे की पगडी पहनाकर टीका किया जाता है।

तत्पश्चात एक समधी पहले चावल रखकर मंत्र पढ़कर मुर्गे को खिलाता है फिर उस की बलि दी जाती है। चावल से यह परिक्षण किया जाता है कि मृतक अपने परिवार को अब भी प्यार करता है या नहीं? यहद मुर्गा चावल खा लेता है तो यह माना जाता है कि मृतक का अपने परिवार से प्रेम अब भी बना हुआ है। इसके बाद मछली वाले घड़े का पानी, मछली और अंगूठी के साथ जमीन पर उडेल दिया जाता है फिर खाली घडे में मछली डालकर उसे भी लटका दिया जाता है अथवा चबूतरा बनाकर उसके ऊपर रखा जाता है फिर समधी द्वारा घर की सोनवानी की जाती है। सोने के किसी आभूषण को पानी में डूबाकर पानी को घर में छिड़काव करता है। इससे घर पवित्र माना जाता है। मृतक का कुण्डा रखने का निश्चित विधान है। यदि कोई व्यक्ति गंभीर बीमारी दुर्घटना अथवा जंगली जानवर ने मारा हो तो, उसका कुण्डा घर में प्रवेशित नहीं कराया जाता। यह बातें महिलाओं के लिए भी लागू है साथ ही यदि महिला का एक से दूसरी बार विवाह हुआ है अर्थात चूड़ी पहनकर आई है अथवा पैटू आई है और उसका सत्ता उसके ससुराल वालों ने मायके वालों को नहीं दिया है तो उसकी मृत्यु के बाद उसका जीव ठण्डा कर दिया जाता है। उसे हानाडुम का सम्मान प्राप्त नहीं होता। इसका कारण यह है कि गोंडी धर्म अनुसार प्रत्येक मनुश्य को एक जीव माना जाता है।कन्या के विवाह के समय जब सत्ता पटाया जाता है। उस वक्त देवकौडी दी जाती है अर्थात कन्या दूसरे गोत्र देव की जीव है। वर पक्ष, कन्या के देवताओं से इस जीन का मूल्य चुकाकर उसे खरिदता है। सामान्य नियम यही है कि किसी वस्तु पर पूर्ण अधिकार तभी होता है जब उसका मूल्य चुकाया था तो उसका मूल्य दुबारा नहीं चुकाया जाता। इसलिए ऐसी महिलाओं का स्थान देवमहत्व की दृष्टि में नीचे होता है। पैटू आई महिला का सत्ता यदि उसके पति या परिवार के लोगों ने नहीं दिया है तो उसका पुत्र, पिता की मृत्यु के बाद भी, मामा के घर पंहूच सकता है। इसके बाद ही वह अपनी माता की मृत्यु के बाद कुण्डा भीतर रखने का अधिकारी होता

(पेनठाना) हानाडुमा का स्थान

बस्तर के गोंड जनजातियों मे मृतात्मा को हानाल डूमा नाम से संबोधित किया जाता है। यह घड़ा घर के सबसे बड़े पुत्र के पास रहता है। जिसे हानाल अड़का कहा जाता है। यह मुखिया के घर पर रखा जाता है। साथ ही मृत आत्माओं के नाम से अन्य घडा रखा जाता है। इसे नूका अड़का कहा जाता है। इसमें धान का चावल या कुटकी कोदो का चांवल रखा जाता है यह माना जाता है कि इस घड़े में रखी सामग्री पूर्वजों की कृपा से खराब नहीं होती। पुत्रों के मूल परिवार से अलग होने के बाद भी इस कुण्डा का विभाजन नहीं होता बल्कि जिस स्थान पर यह कुण्डा रखा होता है। उस स्थान में परिवार की विवाहित कन्या एवं वयस्क अविवाहित कन्याओं का प्रवेश वर्जित होता है। न ही वे उसे स्थान स्पर्श कर सकती है। केवल परिवार की बहू ही उस स्थान में प्रवेश कर सकती है, परंतु ऋतुमती होने पर उसका प्रवेश भी वर्जित होता है। हानाकुण्डा परिवार के लिए बिंदु होता है जो घर के किसी अंदरूनी कमरे में अंधेरे कोने में रखा जाता है। जहां उनका अन्न भण्डारण होता है जिसे हानाल खोली अर्थात् पूर्वजों का कमरा कहा जाता है। जब तक नववधू अपने हाथों से बना भोजन हानाकुण्डा को नहीं देती तब तक, वह अपने पति के गोत्र में सम्मिलित नहीं हुई मानी जाती है।

(साभार - गोंडवाना गोंड नेंगी जनजातिय गांव की धार्मिक संरचना)

परलकोट विद्रोह के जननायक आदिपुरुष एवं अमर शहीद गेंदसिंह नायक की शौर्य गाथा

परलकोट विद्रोह और गेंदसिंह नायक की भूमिका

पराधीनता की बेड़ियों को तोड़कर स्वतंत्रता की अलख जगाने में बस्तर अंचल के जननायकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। छत्तीसगढ़ राज्य में ब्रिटिश दासता के विरुद्ध सर्वाधिक विद्रोह बस्तर क्षेत्र में हुये हैं। इतिहास गवाह है कि आदिवासी स्वाभिमान ने कभी भी गुलामी स्वीकार नहीं की है। आदिवासी विद्रोह और उनके नेतृत्वकर्ता जननायकों ने अद्भुत शौर्य ,साहस और कुशल रणनीति से इतिहास में अमिट छाप छोड़ी है। ऐसे ही एक जनजातीय क्रॉतिवीर अमर शहीद गेंदसिंह बाऊ का नाम इतिहास के पन्नों में स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

गेंदसिंह का जन्मस्थान बमनी गांव (नरायनकोट)

जनश्रुति है कि, गेंदसिंह का जन्म छत्तीसगढ़ प्रदेश के वर्तमान नारायणपुर जिले के बमनी गांव में हुआ था। इनके माता-पिता और जन्मतिथि के बारे में ठीक ठीक जानकारी का अभाव है, लेकिन किंवदंती है, कि ये नरायनकोट के राजवंश से संबंधित रहे हैं। प्राचीन नारायणपुर नरायनकोट के नाम से जाना जाता है, जो कि वर्तमान में बमनी गांव में स्थित है। नागवंशी राजा नारायणदेव ने इस नगर को बसाया था। बमनी गांव से प्राप्त ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक साक्ष्य नल - नागवंशी शासनकाल में आदिवासियों की समृद्ध सत्ता की ओर इशारा करते हैं। लाल रंग के चौकोर और लंबाई में बड़े आकार की पक्की ईंटें, सिक्के/मुहरें, शिव - पार्वती की काली पाषाण प्रतिमायें, मुंडा महल /राजमहल के अवशेष, राजा तालाब, रानी तालाब एवं सात आगर सात कोड़ी तरई (147 से अधिक तालाब) इस ऐतिहासिक नगरी की भव्यता और वैभवशाली विरासत की कहानी स्वयं कहते हैं। गेंदसिंह बचपन से ही हमउम्र बालकों के समूह में नेतृत्वकर्ता की भूमिका में होते थे। वे खेलकूद में अपने समूह के मुखिया हुआ करते थे। वीरता एवं साहस का गुण उनमें बाल्यकाल से ही था। युवावस्था में पहुंचने पर इनका विवाह देहारी परिवार की लड़की से हुआ। नये रियासत की स्थापना कर राज करने का स्वप्न इनके मन में था। नेतृत्व गुणों से परिपूर्ण व्यक्तित्व गेंदसिंह को नरायनकोट अधिक समय तक रास नहीं आया।

भागेश्वर पात्र

कोंगाली गढ़

राजसी प्रतिभा एवं साहस के धनी गेंदसिंह नये राज्य के निर्माण के लिए नरायनकोट से सपरिवार माड़गांव की ओर गये। कुछ समय तक कोंगाली गांव में रहे। इस गांव को गढ़ बनाकर

राज करने का प्रयास किया। आज भी कोंगाली गढ़ में इनके द्वारा अर्धनिर्मित महल के अवशेष हैं। बुजुर्गो के अनुसार महल में तीन कमरे हैं। राजा द्वारा निर्मित खेत के प्रमाण और उनके द्वारा निर्मित तालाब आज भी स्थित हैं।

कोंगाली गांव इन्हें अधिक दिनों तक रास नहीं आया। बहुत दिन गुजरने के बाद एक दिन शिकार करने के उद्देश्य से हिरन का पीछा करते हुए परलकोट क्षेत्र के सितरम नामक स्थान पर पहुंचे और यहीं पर स्थायी रूप से निवास का मन बना लिया। परलकोट क्षेत्र उनके लिए अनुकूल सिद्ध हुआ। धीरे - धीरे संगठन और नेतृत्व क्षमता से क्षेत्र में लोकप्रिय होते गये।अबुझमाड़ एवं परलकोट क्षेत्र की जनता ने उन्हें अपना राजा माना। उनकी ख्याति परलकोट से लगे चांदा (वर्तमान चंद्रपुर जिला) महाराष्ट्र की सीमा तक पहुंचने लगी।

परलकोट रियासत/जमींदारी

बस्तर भूषण (1908) के लेखक केदारनाथ ठाकुर और बस्तर का मुक्ति संग्राम - हीरालाल के अनुसार परलकोट रियासत बस्तर भूमि के प्राचीन रियासतों में से एक थी। रियासत की राजधानी सितरम गांव में थी। सितरम तीन नदियों कोटरी, निबरा और बोरडिंग के संगम पर बसा है। उत्तर बस्तर में स्थित इस जमींदारी का कुल क्षेत्रफल 1908 ई.में 640 वर्गमील था तथा 1901 की जनगणना के अनुसार यहां की कुल जनसंख्या 5920 थी। जमींदारी के अन्तर्गत कुल 165 गांव थे। बस्तर रियासत के दीवान लाल कालेन्द्र सिंह (1908) और ब्रिटिश इतिहासकार दि ब्रेट के अनुसार गेंदसिंह की उपाधि 'भूमिया राजा' की थी। परलकोट के जमींदार की हैसियत पूर्व में एक रियासत के राजा की भांति थी। मात्र बस्तर राजा के आंशिक नियंत्रण में यह जमींदारी थी परन्तु 1795 के बाद ब्रिटिश - मराठा हस्तक्षेप बस्तर क्षेत्र में बढ़ता गया। कालान्तर में 1818 के बाद बस्तर राजा की स्थिति एक जमींदार की हो गयी। जिसका प्रभाव बस्तर के अधीनस्थ अन्य रियासतों पर भी पड़ा तथा अन्य रियासतों के अधिपति की हैसियत भी एक जमींदार की हो गयी। इस काल में नारायणपुर का क्षेत्र भी परलकोट रियासत के अंतर्गत शामिल था।

'भूमिया राजा' का पद काकतीय शासनकाल के दौरान उन शासकों को दी जाती थी जिनकी स्थिति भूपति, बड़े जमींदार अथवा सामंत की थी। ऐसे भूपति, जमींदार एक समय राजा की तरह अपने रियासत के शासक हुआ करते थे लेकिन 1798 के बाद से बस्तर क्षेत्र में ब्रिटिश दखल

बढ़ने से इनके हितों को चोट पहुंची थी। मौखिक साहित्य के अनुसार गेंदसिंह के आदिपुरूष की उत्पत्ति चट्टान से हुई है। आज भी इसके चिन्ह नरायनकोट (बमनी) गांव में हैं, जिसमें एक पत्थर पर योनि का चिन्ह आज भी देखा जा सकता है। पत्थर से उत्पन्न होने के कारण नरायनकोट के राजा को लोकभाषा हल्बी में " पखनाकोटिया राजा " भी कहा जाता है। आधुनिक युग में इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि कोई व्यक्ति पत्थर फोड़कर कैसे उत्पन्न हो सकता है? लेकिन इसका सांकेतिक अथवा प्रतीकात्मक अर्थ लगाया जाये तो यह सिद्ध होता है कि यहाँ का राजा इसी भूमि का आदिनिवासी अथवा आदिवासी था। वैसे भी प्राकृतिक पदार्थों, काल्पनिक पुरूषों अथवा पौराणिक चरित्रों से संबंध जोड़कर अपनी श्रेष्ठता का दावा करने के कई साक्ष्य भारतीय इतिहास में मिलते हैं।

अलौकिक एवं विराट व्यक्तित्व के धनी गेंदसिंह

संगठन क्षमता के धनी गेंदसिंह की ख्याति अबुझमाड़, परलकोट एवं परलकोट की सीमा के बाहर महाराष्ट्र तक पहुँचने लगी इनकी प्रसिद्धि को सुनकर एक समय बस्तर महाराजा इनसे भेंट करने परलकोट रियासत पहुँचे थे तथा इन्हें " भूमिया राजा " का पद प्रदान किया था। नेतृत्व एवं संगठन क्षमता जैसे गुणों के कारण इनके पुरखे नायक गोत्रीय थे। नायक राजपद होता था। युद्ध के समय जो व्यक्ति सेना की कमान संभालता था अथवा सेना में अग्रणी भूमिका निभाता था, उसे राज्य की ओर से "नाईक" अथवा " नायक " पद से सुशोभित किया जाता था। कालान्तर में यह नाईक अथवा नायक का पद हल्बा जनजाति में उपनाम में समाविष्ट हो गया। परलकोट की सीमायें महाराष्ट्र के चांदा तक लगती थीं। ऐसे में इस क्षेत्र के सीमावर्ती हिस्सों में मराठी सँस्कृति का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। " भाऊ "अथवा " बाऊ " मराठी सँस्कृति में आदरसूचक शब्द होता है। अपने से बड़ों के संबोधन के लिये आमतौर पर भाऊ शब्द का प्रचलन है। बस्तरिया सँस्कृति में " दादा " का जो महत्व है वही महत्व मराठी सँस्कृति में भाऊ का है। परलकोट तथा सीमावर्ती भाग की जनता इन्हें आदर से भाऊ संबोधित करती थी। कालांतर में इनके नाम के साथ "बाऊ" अथवा "भाऊ " शब्द उपनाम के रूप में जुड़ गया। वर्तमान में इनके वंशजों को बाऊ नाईक से संबोधित किया जाता है। इस क्षेत्र में बस्तरिया एवं मराठी सँस्कृति का मिश्रित रूप आज भी देखने को मिलता है। अबुझमाड़ क्षेत्र के बुजुर्गो के अनुसार गेंदसिंह बाऊ विलक्षण व्यक्तित्व के मालिक थे। इनके इर्द-गिर्द सदैव मधुमक्खियों का झुण्ड गोल घेरे में रहता था ?। मधुमक्खियाँ राजा की सुरक्षा के साथ-साथ आभामंडल की तरह व्यक्तित्व की शोभा बढ़ाने का कार्य करती थीं। जैविक युद्ध में भी ये मधुमक्खियाँ काम आती थीं। अपनी रणनीतिक स्थिति सुदृढ़ करने के लिये उन्होंने परलकोट की किलाबंदी की थी। न्यायप्रियता, उदारता एवं दानवीरता के कारण वे प्रजा के बीच काफी लोकप्रिय थे। भूमिया राजा पालकी में अथवा घोड़े पर सवार होकर प्रजा का हाल-चाल जानने क्षेत्र का दौरा करते थे। वे हरसंभव अपनी गरीब प्रजा को अन्न, वस्त्र एवं धन देकर सहायता पहुँचाते थे। इनकी लोकप्रियता के कारण ?गरेज और मराठा इनसे भय खाते थे।

परलकोट/अबुझमाड़ विद्रोह के कारण

सन् 1818 में आंग्ल - मराठा संधि के तहत बस्तर राजा की शक्ति सीमित कर दी गई और बस्तर रियासत का संपूर्ण क्षेत्र ब्रिटिश अधिकारियों की निगरानी में आ गया तथा सत्ता का केंद्र भोंसला शासन के अधीन नागपुर हो गया। बस्तर राजा का दर्जा शासक से जमींदार की हो गई। बस्तर रियासत के आंशिक नियंत्रण में रहकर जो आदिवासी जमींदार स्वयंभू अथवा स्वायत्त शासक थे, उनकी प्रतिष्ठा को सदा के लिए समाप्त कर दिया गया। जिससे नाराज होकर आदिवासी जमींदार तत्कालीन ब्रिटिश - मराठा शासन के विरुद्ध हो गये। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से 1795 ई. से ही ब्रिटिश सरकार ने बस्तर क्षेत्र पर हस्तक्षेप करना प्रारंभ किया था, जब ब्लण्ट की सहयोगी सेना ने इस क्षेत्र पर घुसपैठ किया था। स्वतंत्रता प्रेमी आदिवासी अपने बीच बाहरी गोरों को देखकर अपनी विशिष्ट पहचान को लेकर

आशंकित थे तथा आदिम सँस्कृति के लिए इन्हें खतरा मानने लगे थे।कभी - कभी पर्यटक के वेश में भी ?ँगरेज अपने गुप्तचर आदिवासी क्षेत्र में भेजते थे।

अंगरेज - मराठा अधिकारियों के दौरे के समय आदिवासियों को पालकी ढोना पड़ता था। सामान ढोने से लेकर अन्य बेगार के कार्य करने पड़ते थे। ऐसे बेगारी कार्य आदिवासियों के स्वाभिमान के विपरित था। मनाही करने पर अत्याचार सहना पड़ता था जो कि स्वाभिमानी आदिवासियों के लिये असहनीय था। मराठा शासन में लूटमार, शोषण आम बात हो गई थी। टैक्स का बोझ जनता पर भारी था और आदिवासियों से मनचाहा टैक्स वसूला जा रहा था।

बस्तर रियासत में मराठा

अंगरेज शासन से पूर्व राजकीय कार्यों में हल्बा जनजाति के योगदान को देखते हुये इस जनजाति को कर में छूट प्राप्त थी। बस्तर में हल्बा प्रतिष्ठित जाति मानी जाती थी लेकिन मराठा शासन में इस जनजाति पर भी कर का बोझ लादा गया जिससे हल्बा जनजाति की प्रतिष्ठा को चोट पहुँची थी। पुराने जमींदारों की स्थिति में गिरावट से भी आदिवासी खुश नहीं थे क्योंकि अब इनकी सरकार अपनी नहीं बल्कि गैर थी।

मराठा फौज से निष्कासित पिंडारी लूटपाट के इरादे से बस्तर प्रवेश करते थे। बंजारा जाति के बस्तर में प्रवेश से आदिवासियों का आर्थिक शोषण हुआ। आदिवासी बाहरी दुनिया से बेखबर अपनी मस्ती में जीने वाले लोग हैं।इनकी आवश्यकतायें सीमित होती हैं। इन्हें नमक, कपड़ा और तेल के लिये व्यापारियों पर निर्भर होना पड़ता है। बंजारा जाति इन वस्तुओं की आपूर्ति आदिवासियों को करती थी। बंजारा व्यापारी आदिवासियों से वनोपज औने - पौने दाम में खरीदकर बदले में नमक व कपड़ा इन्हें बेचते थे। इन कारणों से जनजातियों का आर्थिक शोषण हो रहा था। शोषण, अन्याय और अत्याचार से अबुझमाड़ एवं परलकोट क्षेत्र की जनता आंग्ल - मराठा सरकार के विरुद्ध उद्वेलित हो रही थी।बस उन्हें साथ चाहिये था तो एक सुसंगठित नेतृत्व एवं मार्गदर्शन की,जो उन्हें उनका खोया आत्मसम्मान पुनः दिला सके। आसन्न संकट के इस काल में सबकी निगाहें अपने भूमिया राजा गेंदसिंह पर टिकी थीं।

विद्रोह की शुरुआत

विद्रोह का केंद्र परलकोट की राजधानी सितरम था। अबुझमाड़ एवं परलकोट के गांवों में

हल्बा, मुरिया, माड़िया एवं परंपरागत जातियाँ आबाद थीं। परलकोट जमींदारी के अन्तर्गत गेंदसिंह के कर्मचारी एवं संदेशवाहक समय - समय पर जनता के सुख-दुख संबंधी खबर राजा तक पहुँचाते थे, जिसमें प्रजा के ऊपर अंगरेज??? - मराठा अधिकारियों द्वारा किये जा रहे उत्पीड़न का जिक्र होता था। गेंदसिंह भी अपने पुराने सम्मान, प्रतिष्ठा के गिरने से तत्कालीन शासन से नाराज थे।

गेंदसिंह ने परलकोट और सप्तमाड़िया पहाड़ी में आबाद जनजातीय मुखियाओं एवं विश्वस्त लोगों की बैठक बुलाई। बैठक में सभी ने एक सुर में आततायी शासन के विरोध में संघर्ष के लिये विद्रोह का बिगुल फूंकने का निश्चय किया तथा विद्रोह के नेतृत्वकर्ता के रूप में भुमिया राजा के नाम का समर्थन किया।अबुझमाड़, परलकोट से लेकर महाराष्ट्र के गढ़चिरौली तक के विस्तारित क्षेत्र में जनजातीय समाज ने गेंदसिंह को नायक के रूप में स्वीकार किया।

युद्ध में जैविक हथियार का प्रयोग

अबुझमाड़िया लड़ाके शत्रु सेना को देखते ही पेड़ों पर लटके मधुमक्खियों के छत्ते में आग लगा देते थे और सैनिकों पर विष बुझे बाणों की वर्षा करते थे। मराठा - अंगरेज सैनिक के पकड़े जाने पर उसकी बोटी - बोटी काट डालते थे। विद्रोहियों की छापामार युद्ध नीति से दुश्मन सैनिकों के हौसले पस्त होने लगे थे। विद्रोह का विस्तार परलकोट से प्रारंभ होकर अबुझमाड़, नारायणपुर और महाराष्ट्र के चांदा, गढ़चिरौली तक हो चुका था। आदिवासी 500 - 1000 की सँख्या में निकलते और सैनिकों पर हमला करते थे। विद्रोह का संचालन अलग - अलग टुकड़ियों में माँझी लोग करते थे। रात्रि में सभी विद्रोही किसी गोटुल में एकत्रित होते थे और अगले दिन की योजना बनाते थे।

नारायणपुर गढ़ और मावली माता का चमत्कार

बस्तर क्षेत्र में ऐतिहासिक साक्ष्य लोकगाथाओं के रूप में जनमानस में मौजूद हैं।ऐसी ही विद्रोह से जुड़ी एक घटना नारायणपुर क्षेत्र में घटित हुई है। मावली माता नारायणपुर क्षेत्र की अधिष्ठात्री देवी हैं। प्राकृतिक आपदा, दैवी संकट अथवा आकस्मिक विपत्ति के समय गढ़ की रक्षा का दायित्व मावली माता के कंधों पर रहता है। नारायणपुर के उत्तर दिशा की ओर से अकस्मात आक्रमण होने का आभास माता को हो गया था। मराठा सैनिक विद्रोह को दबाने के मकसद से कई दिनों से पैदल नारायणपुर की ओर बढ़ रहे थे। थके हारे पैदल सैनिकों ने एक स्थान पर विश्राम कर आगे की योजना बनाने का निश्चय किया। थोड़ी देर विश्राम कर पास में ही बहने वाली नदी में स्नान करने चले गये।

माता मावली ने उनके विश्राम स्थल पर माया जाल से बाजार की रचना की। बाजार में तरह-तरह के पकवान दुकानों की शोभा बढ़ाने लगे।भूखे - प्यासे सैनिक फल - पकवानों को देखकर खाने का मोह नहीं छोड़ पाये। जिसने भी उन फलों को चखा, मृत्यु की नींद में हमेशा के लिये सो गया। एक सैनिक जो देरी से स्नान कर वापस आया, अपने मृत साथियों को देखकर उसी स्थान पर कहुआ वृक्ष पर लिखा कि - " आगे खतरा है! " यह स्थान नारायणपुर से उत्तर दिशा की ओर 13 किलोमीटर की दूरी पर है,जिसे " मावली मोड़ " कहा जाता है। आज भी यहाँ माता के पदचिन्ह पत्थर पर स्थित हैं। इस रहस्यपूर्ण कहानी पर विश्वास न भी किया जाये , तो भी यह सिद्ध होता है कि विद्रोहियों ने दुश्मन सैनिकों को भारी क्षति पहँचाई थी।

विद्रोह का अंत

आदिवासी लड़ाके इतने आक्रामक हो गये कि इनके लूटपाटों और कत्लेआम से ब्रिटिश - मराठा अधिकारियों, ठेकेदारों, व्यापारियों और गैर आदिवासियों में दहशत का वातावरण निर्मित हो गया। इनके हमले इतने भयानक होते थे कि जो सामने आया, वह बच नहीं सकता था।वे उन लोगों को नुक्सान नहीं पहुँचाते थे, जो उन्हें सम्मान देते थे। गैर आदिवासियों में इन विद्रोहियों

के प्रति ऐसा भय पैदा हो गया था कि वे अपने घरों के पास सुरंगें खोद लिये थे, जिससे वे आक्रमणों से स्वयं सपरिवार बच सकें। भीषण विद्रोह को देखते हुये ब्रिटिश अधिकारी मेजर एग्न्यू ने 01 जनवरी 1825 और 04 जनवरी 1825 को विद्रोहियों की गतिविधियों की विस्तृत रिपोर्ट सरकार को सौंपी।साल भर चलने वाले इस विद्रोह ने क्षेत्र में भुखमरी की स्थिति पैदा कर दी।

विद्रोह की तीव्रता को देखते हुये मेजर एग्न्यू ने 4 जनवरी 1825 को चांदा के पुलिस अधीक्षक कैप्टन पेव को निर्देशित किया कि विद्रोह को तत्काल दबायें। फलस्वरूप मराठों और अंगरेजों की सम्मिलित सेना ने 10 जनवरी 1825 को परलकोट के किले पर घेरा डाल दिया। किले की दीवार को तोप से उड़ाया गया। आदिवासी लड़ाकों ने शत्रु सेना का डटकर मुकाबला किया लेकिन तोप - बंदूकों से आग उगलते गोला - बारूद के आगे पारंपरिक अस्त्र - शस्त्र तीर - धनुष, टंगिया,फरसा की धार निस्तेज साबित हुई। विद्रोहियों की हार हुई।दस दिनों के कड़े संघर्ष के बाद अन्ततः परलकोट पर ब्रिटिश - मराठा सेना ने कब्जा कर लिया। गेंदसिंह को गिरफ्तार कर लिया गया। गेंदसिंह और उनके साथियों पर मुकदमा चला। 20 जनवरी 1825 को कैप्टन पेव के आदेश से गेंदसिंह को उनके महल के सामने इमली पेड़ में फाँसी की सजा दी गई। गेंदसिंह के पाँच पुत्रों में से एक युद्ध में मारा गया।बचे चार पुत्रों के वंशज आज जीवित हैं।उनका एक पुत्र झाड़ापापड़ा (महाराष्ट्र) में बस गया। गेंदसिंह के बड़े बेटे कुमुदसाय के वंशज वर्तमान में सितरम में हैं। इनके छोटे बेटे के वंशज काँकेर में निवासरत हैं। गेंदसिंह के एक पुत्र के वंशज छोटेडोंगर (नारायणपुर) में आबाद हैं , जिन्हें नारायणपुर क्षेत्र में " परलकोटिया " के नाम से जाना जाता है।

गेंदसिंह का ऐतिहासिक दृष्टि से मूल्यांकन

निःसंदेह परलकोट विद्रोह के नेतृत्वकर्ता गेंदसिंह और उनके अनुयायियों का बलिदान अन्याय, अत्याचार और शोषण के विरुद्ध एवं बस्तर भूमि की मुक्ति के लिए था । आदिवासी जननायकों का बलिदान व्यर्थ नहीं गया। विद्रोह भले ही असफल साबित हुआ लेकिन ऐसे क्राँतिवीरों की शौर्यगाथाओं ने आजादी के लिए भावी संघर्ष की पृष्ठभूमि तैयार की। सन्1857 का सैनिक विद्रोह 'भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम ' है लेकिन इसके लगभग तीन दशक पूर्व ही बस्तर भूमि में आदिवासी वीरों ने ब्रिटिश हुकूमत के विरुद्ध संघर्ष का शंखनाद किया था। ऐतिहासिक कालक्रम के अनुसार 1824 - 1825 का परलकोट विद्रोह कई मायनों में महत्वपूर्ण है। जनजातियों का यह स्वस्फूर्त आंदोलन था। जननायक गेंदसिंह कुशल नेतृत्वकर्ता, संगठनकर्ता और रणनीतिकार के रूप में इतिहास में अमर हैं। छ.ग. के उत्तर - बस्तर काँकेर जिले में सितरम, परलकोट में उनकी स्मृति में आदमकद प्रतिमा की स्थापना की गई है। अखिल भारतीय हल्बा समाज द्वारा प्रतिवर्ष 20 जनवरी को उनके बलिदान दिवस को गेंदसिंह शहादत दिवस के नाम से मनाया जाता है। ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर गेंदसिंह छत्तीसगढ़ के प्रथम शहीद हैं लेकिन इस अमर बलिदानी को उनके योगदान का वास्तविक सम्मान आज तक नहीं मिल सका है।

आदिम शिक्षा केन्द्र 'गोटुल ' की भूमिका

गेंदसिंह संगठन क्षमता और नेतृत्व गुणों के साथ अच्छे रणनीतिकार भी थे। वे जानते थे कि आदिवासी लड़ाके छापामार युद्ध में पारंगत हैं। आदिवासियों का गोटुल (गोंडी भाषाविदों के अनुसार) साँस्कृतिक केन्द्र होने के साथ ही रणनीतिक योजना का केन्द्र भी था। धावड़ा वृक्ष की टहनी को विद्रोह के प्रतीक के रूप में चुना गया। अबुझमाड़ के सभी गांवों में गोटुल होते थे। धावड़ा वृक्ष की टहनी को लेकर अबुझमाड़िये गांव - गांव जाकर लोगों को विद्रोह के लिए संगठित करने लगे। गोटुल में धावड़ा वृक्ष की टहनी पहुँचने का संकेत था कि - विद्रोह के लिये तैयार रहें! इस प्रकार की गतिविधि विद्रोह के लिये आमंत्रण की तरह था। जिस गोटुल के सदस्य इस प्रतीक को स्वीकारते थे, इसका तात्पर्य था कि वे विद्रोह के लिए तैयार हैं। धावड़ा वृक्ष के पत्तों के सूखने से पूर्व विद्रोह के लिए एकत्रित होने का आव्हान था।

24 दिसंबर 1824 से आदिवासी लड़ाके संगठित होने लगे थे। धीरे-धीरे यह विद्रोह अबुझमाड़ की सीमा को पारकर चांदा (महाराष्ट्र) तक फैल गया। 4 जनवरी 1825 तक विद्रोह की चिंगारी पूरे क्षेत्र में प्रभावी होने लगी। आदिवासी अपने हथियार टंगिया, फरसा, तीर - कमान को पैना करने लगे।

शुरूआत में विद्रोहियों के निशाने पर बंजारा जाति के व्यापारी आये। इन्होंने व्यापारियों के काफिले को लूटा, उन्हें बंधक बनाया। उनके साथ ज्यादती की और मार भगाया। अबुझमाड़ियों ने देखा कि मराठा सैनिक उन पर कोई कार्यवाही नहीं कर रहे हैं तो विद्रोहियों के हौसले बुलंद हो गये। आदिवासी झुंड के झुंड पारंपरिक हथियारों के साथ निकलते थे। मराठा सैनिक या ?ंगरेज को पकड़ने पर निर्ममता पूर्वक उसकी हत्या कर देते थे। विद्रोह में आदिवासी महिलाओं ने भी लड़ाकों का साथ दिया था। महिलायें चरवाहे के भेष में जंगलों में निकलती थीं और दुश्मन सैनिकों के आने की सूचना विद्रोहियों तक पहुँचाती थीं। नगाड़ा, मांदरी बजाकर और तोड़ी फूंककर विद्रोही अपने साथियों को सतर्क करते थे।

।। तुम भटक न जाना ।।

ऐ दोस्त---
राह से, तुम कभी भी, भटक न जाना,
आये, कितनी भी मुश्किलें--
पर, तुम, निरंतर, आगे बढ़ते ही जाना ।।

यदि थक भी जाओ तो--?
कर लेना, घड़ी भर, तुम आराम,
पर, कभी भी, अपनी सोच न बदलना,
करते रहना हरपल, गहन चिंतन-मंथन,
पर, कभी, अपनी राह से ---
तुम भटक न जाना--।।

लगे , कभी ऐसा, कि कोई साथ चले--
उस पल,तुम कर लेना,मुझको भी याद
रहूँगा मैं, सदा ही, तुम्हारे आस-पास,
बनकर, हमसाया की तरह देता रहूँगा,
हरपल हिम्मत तूझे नि:स्वार्थ--।।

तुझे, राह से भटकाने--
कोई कितना भी, करे पुरजोर प्रयास,
या उड़ाते रहे, तेरा भरपूर मजाक,
या कहते रहे कोई तूझे बेवकूफ,
पर, रखना, अपना मकसद साफ,
विषय व लक्ष्य की पहचान हो तूझे,
उसे सही ढंग से, रखने का दम--।।

पर,कभी भी, तुम --
अपनी राह से भटक न जाना--
गर, मिल जाए, मंजिल तूझे,
हो जाए मकसद भी पूरा तेरा--
पर, हरगिज भूलना नहीं तुम,
जिसने दिया है, तूझे सच्चा साथ--।।

वरना, तू पाकर, अपनी मंजिल को भी,
फिर भी, खो देगा, अपनों का साथ,
एक दिन, तू रह जाएगा, अकेला,
"अरमान" कह रहा, तुझसे--।।

वक्त करता रहे,ढेरों सितम--
फिर भी,अपनी राह से,भटक न जाना,
याद रखें,हमेशा,दिया जिसने तेरा साथ
जुड़े रहना,हमेशा उसके साथ--
यही है,जीवन की,कड़वी सच्चाई--।।

एच. एस. अरमो "अरमान"
रायपुर,छत्तीसगढ़ ।
मोबा: 94252--02803

छोड़ना पड़ता है जब गांव

देखता हूं कि-
किस तरह
आदिवासी/ मूल निवासी
हाशिए पर आ गए हैं.
*
किस तरह
जल जंगल जमीन से
खदेड़े जाने लगे हैं.
*
किस तरह
शक्तिशाली/ समृद्धिशाली लोग
कब्जा रहे हैं/ उनके पुरखों की जमीन.
उजाड़ रहे हैं,
उनके घास फूस से बने/ आशियाने.
*
किस तरह
सरकारी तंत्र
लगाने को आतुर है/ कारखाने.
*
किस तरह
विकास के नाम पर
छले जा रहे हैं आदिवासी.
*
किस तरह
लगातार जंगलों का विनाश जारी है
विलासितापूर्ण जीवन के लिए.
*
किस तरह
आदिम संस्कृति में घालमेल कर
प्रकृति पूजकों को भ्रमित करते जा रहे हैं.
किस तरह
जद में आने लगे हैं/ आदिवासी जीवन.
*
किस तरह
खामोश है
सारे रहनुमां और अधिकारी
सत्ता की गलियारे में/
भूलकर हैं / आदिवासियत.
*
किस तरह
रोज
खूबसूरत वादियों की धरती/ बस्तर
विकास की भेंट चढ़ती जा रही है.
*
किस तरह
बसंत का यौवन
छिनता जा रहा है/ और
पलाश के फूलों से रंग
उतरता जा रहा है.
*
किस तरह
सरई/ साल/ सागौन/
चार/ तेंदू/ के जंगल
उजड़ते जा रहा है.
*
किस तरह
जंगल के स्वामी को ही,
जंगल से, बेदखल किया जा रहा है.
*
किस तरह
आदिवासी गांवों को,
उजाड़ने का सिलसिला जारी है।
कल कारखाने/ उत्खनन/ बांध या विकास के नाम पर.
*
किस तरह
आदिवासी जनजीवन सिमटते जा रहा है.
*
किस तरह
अस्मिता बचाने संघर्ष में लगे
आदिवासियों की मौत हो जाती है.
यह कि-
मौत भूख से नहीं वरन आर्थिक लूट से की गई हत्या है ।
*
जरा देखो तो
क्या है इनके पास
सिवा, जंगल और जमीन के.
कितना असहाय, बेबस होता होगा
जब विकास के नाम पर
उन्हें बार-बार/ घर बार/ गांव/ खेत खार/ छोड़ना पड़ता है.
*
हमारे अपने ही
मंत्री संत्री बने बैठे हैं गूंगे- बहरे/
चुपचाप
अपने ही लोगों को बिखरते-उजड़ते देखते हैं.
जो आदिवासी हितों की
रक्षा के लिए चुने जाते हैं.
*
यही लोग
विकास नहीं होने के/ गुनाहगार तो है
बस्तर के विनाश के जिम्मेदार भी है.

दरवेश आनंद

बात उन दिनों की है जब प्रदेश में आदिवासियों के 32% आरक्षण की मांग को लेकर जगह-जगह आंदोलन धरना प्रदर्शन हो रहे थे। छत्तीसगढ़ प्रदेश के चुनिंदा स्थानों के साथ राजाराव पठार राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 30 जिला बालोद मे भी धरना, प्रदर्शन ,आंदोलन हुआ करता था। मुझे याद है आंदोलन को कुचलने के लिए वर्ष 2010, 2011, 2012 प्रत्येक साल 10 दिसंबर को समाज के क्रांतिकारियों के खिलाफ तत्कालीन सरकार एफ आई आर दर्ज कर डराने धमकाने का प्रयास करती रही है।

वीर मेला राजाराव पठार के 10 बरस का ऐतिहासिक सफर

आर एन ध्रुव

19 मार्च 2012 को तो सरकार ने क्रूरता की हद ही पार कर दी जब गोंडवाना भवन टिकरापारा रायपुर से हजारों की तादाद में सामाजिकजन शांतिपूर्ण ढंग से रैली विधानसभा के लिए प्रस्थान कर रही थी। सिद्धार्थ चौक में पुलिस द्वारा बेदर्दी से आंदोलनकारियों की अंधाधुंध लाठी चार्ज कर बेदम पिटाई शुरू कर दिए। कई लोगों के खिलाफ बड़ी-बड़ी गैर जमानती धाराएं लगाकर एफ आई आर दर्ज कर दिए। समाज के 72 सामाजिक मुखिया को सेंट्रल जेल रायपुर में बंद कर दिए। भारी तादाद में सामाजिक जनों को सेंट्रल जेल रायपुर के साथ बलौदाबाजार, दुर्ग, महासमुंद आसपास के जितने भी जेल थे उसमें बंद कर दिए। गोंडवाना भवन टिकरापारा में भोजन कर रहे लोगों पर लाठी बरसाए, नर्तक दल की बच्चियों को दौड़ा-दौड़ा कर मारे, समाज के बुजुर्गों को बेदर्दी से मारे। परिणाम स्वरूप सरकार को 32% आरक्षण देने के लिए बाध्य होना पड़ा।

शहीद वीर नारायण सिंह के बलिदान एवं सामाजिक प्रमुखों के आंदोलन के फलस्वरुप प्राप्त 32% आरक्षण रुपी अधिकार को चिरस्थाई बनाए रखने के लिए आदिवासी समाज द्वारा निर्णय लिया गया कि राजाराव पठार में अब मडई मेला मनाया जाएगा। इस हेतु कंकालीन मंदिर में छत्तीसगढ़ के सभी सामाजिक प्रमुखों के उपस्थिति में एक बैठक रखी गई। जिसमें सर्वसम्मति से आईएएस श्री शिशुपाल शोरी विधायक कांकेर ,संसदीय सचिव छत्तीसगढ़ शासन को मड़ई मेला समिति का अध्यक्ष मनोनीत किया गया। उपाध्यक्ष श्री जी.आर. राना, सचिव स्वर्गीय श्री भागीरथी नागवंशी ,श्री माया राम नागवंशी, श्री बलराम गोटी, कोषाध्यक्ष यू आर

गंगराले, मीडिया प्रभारी श्री आर.एन. ध्रुव., श्री कृष्ण ठाकुर, श्री विनोद नागवंशी, प्रचार सचिव तरेंद्र भंडारी, कुंजेश्वर ठाकुर, स्वर्गीय तेनसिंह ध्रुव, महिला प्रभाग श्रीमती कांति नाग, सुश्री प्रीति नेताम, श्रीमती शशि ध्रुव, श्रीमती गीता नेताम, श्रीमती बुधनतीन ध्रुव,युवा प्रभाव श्री नारायण मरकाम, श्री अश्वनी कांगे, संरक्षक श्री अरविंद नेताम पूर्व केंद्रीय मंत्री, श्री नंदकुमार साय पूर्व सांसद, संयोजक मंडल श्री बी.एल. ठाकुर आईएएस, श्री जे मिंज आईएएस, श्री जी एस धनंजय आईएएस, श्री बी पी एस नेताम आईएएस, श्री भारत सिंह आईपीएस, स्वर्गीय श्री नवल सिंह मंडावी आईएएस को मनोनीत किया गया था। श्री शोरी जी को जब मड़ई ,मेला आयोजन की जिम्मेदारी सौंपी गई उस समय समिति के पास किसी भी तरह का कोई फंड नहीं था। उन्होंने सभी से सहयोग की अपील कर फंड एकत्र किए।

तय हुआ कि 8 दिसंबर 2014 को वीर मड़ई मेला का शुभारंभ वीरभूमि सोनाखान से माटी लाकर किया जावेगा। जिसे बालोद ,कांकेर, धमतरी में आदिवासी समाज द्वारा उक्त मिट्टी को सम्मान पूर्वक कलश में संग्रहित कर 10 दिसंबर को सुसज्जित वाहन से वीर जत्था के साथ राजाराव पठार के लिए सुबह 10:00 बजे तक रवाना किया जावेगा। मार्ग के प्रमुख स्थानों पर वीर माटी के स्वागत पश्चात वीर जत्था राजाराव पठार कार्यक्रम स्थल में पहुंचेगा ।जहां समाज के प्रमुखों द्वारा तीनों जिला से आए हुए वीर माटी कलश का स्वागत निर्धारित स्थान पर आम जनता के दर्शनार्थ स्थापित किया जावेगा। तीनों जिला का वीर माटी कलश यात्रा का निर्धारण इस तरह किया गया कि तीनों जिले का कलश एक साथ निर्धारित कार्यक्रम स्थल पर पहुंच जाएं। सोनाखान से माटी लाने हेतु गोंडी साहित्यविद श्री कृष्णा नेताम, विष्णु नेताम, श्रीमती गीता नेताम श्रीमती नंदा ध्रुव, श्रीमती रूखमणी ध्रुव को जिम्मेदारी सौंपी गई। 10 दिसंबर को देव मड़ई आयोजन हेतु कंकालिन परिक्षेत्र के अध्यक्ष स्थानीय आयोजन समिति के अध्यक्ष स्वर्गीय श्री भागीरथी नागवंशी एवं देव समिति के अध्यक्ष श्री राधे नागवंशी जी को जिम्मेदारी सौंपी गई। स्थानीय आयोजन समिति कंकालीन परिक्षेत्र के सभी गांव के प्रमुखों ने तय किया कि मेला स्थल की साफ-सफाई बारीझबारी से प्रत्येक ग्रामवासी करेंगे। देव समिति को राजाराव बाबा के अनुमति से आसपास के देवी देवताओं को निमंत्रण देने की जिम्मेदारी सौंपी गई। आदिवासी उद्यमियों एवं व्यवसायियों को प्रोत्साहित करने के लिए आदिवासी हॉट का आयोजन रखा गया ।जिसमें आदिवासी उद्यमों द्वारा उत्पादित सामग्रियों का स्टॉल लगाया गया ।इस हेतु महत्वपूर्ण संस्थानों से विज्ञापन के रूप में सहयोग प्राप्त किए। आदिवासियों के संवैधानिक अधिकारों की रक्षा के लिए रणनीति बनाने हेतु आदिवासी महापंचायत का आयोजन रखा गया ।जिसमें देश एवं प्रदेश के विभिन्न जिलों के सामाजिक कार्यकर्ता, विचारक, समाज प्रमुख से प्राप्त सुझावों पर गहन विचार-विमर्श कर संकल्प पारित किए गए। राजाराव पठार में आंदोलन तो पिछले कई वर्षों से होते आ रहा था लेकिन मेला मड़ई का आयोजन प्रथम वर्ष था, जिसके कारण किसी को भी मेला आयोजन का अनुभव नहीं था। इसलिए इस मेले की जानकारी आम लोगों तक पहुंचाने और प्रचारझप्रसार हेतु श्री शोरी जी द्वारा मुझे आर.एन. ध्रुव एवं स्व.श्री धरमसिंह ठाकुर को जिम्मेदारी सौंपी गई। दिन रात एक कर हम लोगों ने मिलकर कांकेर,बालोद, दुर्ग ,बेमेतरा, बिलासपुर, रायपुर में घूमकर हैंड बिल पंपलेट समाज प्रमुख तक पहुंचाएं। धमतरी, पुरुर, नरहरपुर सहित आसपास के विभिन्न बाजारों में घूमझघूम कर सभी प्रकार के दुकानदारों को मेला में आने का न्योता दिए। राजाराव बाबा की कृपा से पहले वर्ष में ही भारी तादाद में लोग उपस्थित होकर मेला को सफल बना दिए। शुरूआती दौर में मेला समिति के अध्यक्ष श्री शिशुपाल शोरी जी एवं उपाध्यक्ष श्री जी आर राणा जी ने मेला को सफल बनाने के लिए तन मन धन से भारी मेहनत किए। इसका अच्छा परिणाम भी हम सबको देखने को मिला जब राजाराव बाबा की कृपा से श्री जी आर राणा जी अनुसूचित जनजाति आयोग के अध्यक्ष बने और श्री शिशुपाल शोरी जी कांकेर के विधायक चुने गए।

आज 10 वर्ष होने जा रहा है तब से लेकर आज तक निरंतर मेला का स्वरूप बढ़ते ही जा रहा है। प्रत्येक वर्ष प्रदेश के सामाजिक मुखिया गण इकट्ठा होकर वीर मेला आयोजन की रूपरेखा रखते हैं। स्थानीय आयोजन समिति कंकालिन परिक्षेत्र द्वारा स्थानीय स्तर पर देव व्यवस्था, मेला स्थल के आसपास साफझसफाई की जिम्मेदारी बखूबी निभाते हैं।

19 सितंबर 2022 हाईकोर्ट के फैसले के बाद आज छत्तीसगढ़ में आदिवासियों के 32% आरक्षण को समाप्त कर पुनः 2012 से पहले वाली स्थिति में लाकर खड़ा कर दिए हैं। समाज आज 32% आरक्षण की मांग को लेकर भारी आक्रोशित है आंदोलित है। ऐसी स्थिति में 2012 के पहले जो आंदोलन होते रहे हैं उसकी याद ताजा हो जाती है।

वीर मेला के लोकप्रियता का अंदाज इसी से लगा सकते हैं कि कार्यक्रम में पूर्ववर्ती सरकार के मुख्यमंत्री श्री रमन सिंह जी एवं वर्तमान सरकार के मुख्यमंत्री श्री भूपेश बघेल जी , महामहिम राज्यपाल छत्तीसगढ़ सुश्री अनुसुइया उइके जी छत्तीसगढ़ शासन के विभिन्न मंत्री एवं विधायक गण, सामाजिकजन इस वीर मेला में बड़ी श्रद्धा से आते हैं और शहीद वीर नारायणसिंह को श्रद्धांजलि अर्पित कर उनकी वीरता को याद करते हैं। राजा राव बाबा से आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

पूर्ववर्ती सरकार के वन मंत्री श्री महेश गागड़ा जी के प्रयासों से बहुत बड़ा सभा हाल का निर्माण, स्वागत द्वार का निर्माण हुआ है। अब लाइट की भी व्यवस्था हो चुकी है। पेयजल की थोड़ी सी समस्या अभी भी है। मुख्यमंत्री जी के घोषणा के अनुरूप इस वर्ष शहीद वीर नारायण सिंह जी की आदमकद मूर्ति, बड़ादेव का चबूतरा एवं अन्य निर्माण कार्य पूर्ण हो जाएंगे।

राजा राव पठार बना देवभूमि 'वीर मेला' में आते हैं लाखों श्रद्धालु

अरमान अश्क बालोद

छत्तीसगढ़ राज्य का सिरमौर , घने वनों से आच्छादित आदिवासी अंचल बस्तर नदी ,नाले ,पहाड़ ,मनोरम प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण

बस्तर की जीवन शैली आज भी अपनी प्राचीन संस्कृति ,सभ्यता को आधुनिकता की होड़ से बचाए हुए हैं देवगुड़ी,देवालय, गोटूल यहां के निवासियों के आस्था का केंद्र बिंदु है। ऐसे ही एक प्रसिद्ध देवालय बालोद ,धमतरी और कांकेर जिले के सीमावर्ती क्षेत्र में स्थित है, 52 गांवो के देवी देवताओं के राजा ' राजा राव देवभूमि' इस पवित्र स्थल में सदियों से आदिवासी वर्ग अपनी संपूर्ण आस्था बनाए हुए हैं । प्रतिवर्ष दिसंबर माह के 8, 9 व 10 तारीख को अंचल के लाखों श्रद्धालु इस पवित्र भूमि में आकर नतमस्तक होकर अपने को धन्य मानते हैं ।प्रदेश के प्रमुख जीवनदायिनी नदी महानदी से खारून नदी के मध्य आदिकाल से विशाल पहाड़ श्रृंखला विद्यमान है । बालोद जिला एवं कांकेर (बस्तर)जिले को जोड़ने वाली इस पर्वत श्रृंखला को राजा राव पठार के नाम से जाना जाता है पहाड़ के मध्य भाग के सबसे ऊंचे स्थान के पठार में स्थित है 52 गांवो के देवी देवताओं के राजा, 'राजा राव देव स्थल' यह पवित्र स्थल धमतरी +कांकेर राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 30 के निकट ही है। किवदंती है कि इस पवित्र स्थल में बरसों से गणेश चतुर्थी के दिन धान की पहली फसल आने पर धान की बालियां अर्पित की जाती है जिसे "बाल पर्व" के रूप में जाना जाता है ।देव स्थल में धान की बालियां अर्पित कर आदिवासी समूह अपने गांव घर में धन-धान्य से परिपूर्ण होने की मनौती करते हैं जिससे उन्हें आशातीत लाभ भी होता है यही आस्था इस देवस्थल के प्रति वर्षों से बनी हुई है ।

देवी देवताओं के मन्दिर व पर्यटक स्थल

राजा राव पठार में अनेक देवी-देवताओं के प्राचीन मंदिर एवं मूर्तियां हैं जिसे देखने दूरदराज से बड़ी संख्या में लोग यहां अक्सर आते रहते हैं यह संपूर्ण इलाका दंडकारण्य भी कहलाता है जहां पर्वत श्रृंखला में नदी ,नाले, पहाड़ ,झरने ,वनों से आच्छादित रमणीक स्थान होने के कारण यह संपूर्ण क्षेत्र पर्यटन के साथ-साथ पिकनिक स्पॉट भी है ।

मन्दिर पूजा समिति

खारून नदी के उद्गम में विराजित कंकालीन माता की पूजा अर्चना के लिए गठित पूजा समिति में कांकेर, बालोद तथा धमतरी जिला के 29 ग्रामों के प्रतिनिधि सदस्य हैं , तथा राजा राव बाबा की पूजा समिति में 36 गांव के प्रतिनिधि सदस्य हैं । उल्लेखनीय है कि दोनों समिति में सर्व समाज (अजजा , अजा, पिछड़ा वर्ग एवं सामान्य वर्ग)के सदस्य सम्मिलित हैं । दोनों

स्थल की पूजा एवं पर्व की तिथियां अलग-अलग होने के बावजूद अंचल के लोगों में इस प्राचीन देवालयो के प्रति अटूट श्रद्धा सदियों से बना हुआ है।

प्राचीन कंकालीन मंदिर

इसी पठार में राजा राव देव स्थल से 4 किलोमीटर की दूरी पर छत्तीसगढ़ राज्य के प्रसिद्ध खारून नदी का उदगम स्थल है , उदगम स्थल पर मां कंकालीन की पाषाण प्रतिमा और प्राचीन मंदिर इस अंचल का प्रमुख धार्मिक स्थल है,मंदिर स्थल में प्रतिवर्ष दशहरा पर्व सर्वप्रथम मनाया जाता है। पंचमी के दिन होने वाले दशहरा को देव दशहरा के नाम से जाना जाता है जिसमें देवी-देवताओं की विशेष पूजा होती है तब दूर-दूर से श्रद्धालु जन यहां आते हैं और अपनी मनोकामना पूरी करते हैं ।

सिया देवी मंदिर और प्राकृतिक झरना

मां कंकाली मंदिर के कुछ ही दूरी पर प्राकृतिक झरना व गुफाओं के मध्यमा सिया देवी का प्राचीन मंदिर भी अति प्राचीन है यह स्थल पर्यटकों के लिए प्रमुख पर्यटन स्थल के रूप में विकसित की गई है सिया देवी मंदिर ग्राम पंचायत नारा गांव के दक्षिण दिशा में विद्यमान है मंदिर के आसपास अनेक सुरंग व गुफाएं हैं तथा यहां स्थित प्राकृतिक झरना इस क्षेत्र में काफी प्रसिद्ध है ज्यादातर लोग अवकाश के दिनों में यहां पिकनिक मनाने बड़ी संख्या में वर्ष भर आते हैं ।

वनांचल की देवी रानी माई

सिया देवी मंदिर से 2 किलोमीटर की दूरी पर इस अंचल की वनदेवी रानी माई मंदिर स्थित है जो इस क्षेत्र के 12 गांव के ग्रामीण निवासियों की कुलदेवी है कहा तो यह भी जाता है कि मां रानी माई बस्तर राज्य के आंगन देव की बहन है तथा प्रत्येक 4 वर्ष में आना देव अपनी बहन से मिलने आज भी यहां आते हैं तब क्षेत्र के लोग बड़ी संख्या में एकत्र होकर पूजा पाठ करते हैं इस मंदिर में भी वर्ष भर श्रद्धालु जनों का आवागमन लगा रहता है।

कनेरी की माता मंदिर

ग्राम पेटेचुआ कंकालीन मंदिर से जुड़ी किवदंती के अनुसार मंदिर स्थल से 8 किलोमीटर दूरस्त उत्तर दिशा की ओर ग्राम कनेरी नवागांव में माता कंकालीन की बहन की विशाल मूर्ति स्थापित है ग्राम कनेरी का मंदिर भी प्राचीन मंदिरों में से एक है वहां भी वर्ष भर श्रद्धालुओं का आवागमन लगा रहता है तथा मनोकामना दीप प्रज्वलित की जाती है इस मंदिर में प्रतिवर्ष चेत नवरात्रि व क्वार नवरात्रि में भी मनोकामना दीप व जवाँरा स्थापित की जाती है तथा वर्ष भर लोग यहां आकर देवी दर्शन का लाभ लेते हैं । ऐसे ही अनेक धार्मिक स्थल व देवी-देवताओं की प्राचीन मंदिरें राजा राव पठार पर्वत श्रृंखला में विद्यमान हैं जो पूरी तरह धार्मिक आस्था का केंद्र भी हैं। इन्हीं देवी देवताओं के 'राजा' राजा राव पठार देव , को सदियों से इस अंचल के सैकड़ों वनवासी अपना आराध्य देव मानते आ रहे हैं तथा प्रति वर्ष 8 ,9 व 10 दिसंबर को इस पठार में विशाल " वीर मेला " का आयोजन किया जाता है जिसमें छत्तीसगढ़ सहित आंध्र प्रदेश ,उड़ीसा ,महाराष्ट्र से आदिवासी समाज के हजारों दर्शनार्थी वीर मेला में एकत्र होते हैं । संभवत राजा राव पठार का यह " वीर मेला " इस प्रदेश का पहला ऐसा मेला है जिसमें आदिवासी वर्ग के लोग अब लाखों की संख्या में एकत्र होकर यहां अपने इष्ट देव का पूजा अर्चना करते हैं

राजाराव पठार में वीर मेला की शुरूआत

जानकारी के अनुसार राजा राव पठार में 10 दिसंबर 2014 को पहली बार वीर मेला वह शहीद वीर नारायण सिंह की श्रद्धांजलि कार्यक्रम का आयोजन हुआ जिसमें लगभग 3 लाख श्रद्धालु जन शामिल हुए थे । वर्ष 2015 में कार्यक्रम को विस्तार देते हुए तीन दिवसीय किया गया। प्रथम दिवस 8 दिसंबर को देवी देवताओं की पूजा देव मिलन रखा गया जिसमें दूरदराज के देवी देवताओं को आमंत्रित किया गया था । द्वितीय दिवस 9 दिसंबर को

...शेष पृष्ठ 43 पर

जनजातीय कविता भाषा और संस्कृति

डुमन लाल ध्रुव

किसी भी देश या प्रदेश के जनजातीय कविता को समझने के लिए उस देश की उस प्रदेश की लोक संस्कृति को जानना बहुत जरूरी होता है। हमारी संस्कृति अपनी भाषाओं और उपभाषाओं में बिखरी हुई है। हर राज्य की जनजातीय कविता भाषा और संस्कृति के आधार पर निहित है। यहां की संस्कृति कृषि प्रधान होने के कारण फसल बुवाई से प्रारंभ होकर फसल की कटाई पर अपना संपूर्ण चक्र बना पाती है इस कारण हमारे यहां सभी मुख्य-मुख्य त्यौहार सावन माह से प्रारंभ होकर होली पर अपना एक संपूर्ण चक्र बना पाते हैं।

छत्तीसगढ़ के जनजीवन में आदिवासी चरित्र की एक ऐसी उज्जवलता है

जो अन्यत्र नहीं पायी जाती है
वे स्वयं धोखा नहीं देते
वे स्वयं कष्ट सह लेते हैं पर दूसरों को कष्ट नहीं देते
वे कठिन परिस्थितियों में भी स्नेह व ममत्व नहीं छोड़ते
जो इस आत्मा से परिचित नहीं होते
वे छत्तीसगढ़ के आदिवासी जीवन की
महिमा व्यक्त नहीं करते।

जीवन में मानवीय संवेदनाओं के सुखात्मक एवं दुखात्मक पहलु जरुर आते हैं। मनुष्य जीवन पर भी इसका व्यापक प्रभाव पड़ता है।

कते जंगल कते झाड़ी कते बन म गा
अगा अगा भइया मोर
कते मेर टेड़ा ला टेरत हाबस गा
कते मेर बासी ला उतारंव रे।।
इही जंगल इही झाड़ी इही बन म ओ
अओ अओ बहिनी मोर इही मेर टेड़ा ला टेरत हावंव ना
इही मेर बासी ला उतारि लेते ना पांच गांठ हरदी ला लेते आबे ना
करसा कलोरी ला लेते आबे ना
परा अउ बिजना ला लेते आबे ना।।
आंखी तोर फूटि जातिस,छाती तोर फाटि जातिस रे
अगा अगा भइया मोर
बहिनी ला काला नइ जानेस रे ।
न तो मोर आंखी फूटे न तो मोर छाती फाटे
अओ अओ बहिनी मोर
गोंड़ - गोड़वानी रीति म चलत हाबे ना
ममा अउ फूफू के बन जाथे ना
पुरखा हा हमर चला ले हे ना ।।

आदिवासी जनजीवन की बहुत सारी कविताएं और उनकी क्रियाएं हैं। बेहतर है कविता रचते-रचते लोक संगीत का भी पुट मिलादें ताकि पाठक वर्ग को गीत, कविता पढ़ते सुनते समय सुरताल में गुनगुनाने का अवसर मिल सके। अपने समय की लोकानुभूतियों को अभिव्यक्ति दे सके।

महुआ झरे रे महुआ झरे,महुआ झरे रे महुआ झरे
डोंगरी के तीर लगे हे साल छींद
लाली परसा बन म फूले
महुआ झरे.....
उगती बूढ़ती ले आवे चार चार मोटियारिन
गावत गावत सबो महुआ बिन डारिन
संझा होवत हे बेरा ढरकथे
कनिहा मटकावत चले रे....

महुआ झरे रे.....

आज का समय जिसमें मनुष्य आत्म केंद्रित होता जा रहा है। संयुक्त परिवार की अवधारणा लगभग समाप्त सी हो गई है। ऐसे समय में इन गीतों की उपादेयता काफी हद तक बढ़ गई है।

पानी रे पिये पियत भर ले
दोसदारी झन छूटय जीयत भर ले
मोला मोहि डारे राजा तोर बोली बचन मोला मोहि डारे ।।

आदिकाल से आदिवासियों में गीतों की शीतलधारा प्रवाहमान है जिसके कारण मानव के मन प्राण को शीतल और सरल बना देते हैं । आदिवासी लोकजीवन आनंद और उत्साह भरकर महत्व को रेखांकित करते हैं। मांदर की थाप पड़ते ही लोकनृत्य जन्म लेता है। आदिवासी विज्ञापन बाजी से दूर जीवन का एक आवश्यक अंग बनकर फूलता-फलता है। संभावनाओं को आश्रय देता है। तभी तो अधरों पर अनायास गीत फूट पड़ते हैं।

ये भंवा के मारे रे मोर रसिया
तिरछी नजरिया भंवा के मारे ।
सिरपुर मंदिर म भरे ला मेला
तोला फोर के खवाहूं राजा नरियर भेला ।।
आये ला सावन छाये ला बादर
तोर सुरता के लगायेंव राजा आंखी म काजर ।।
धान के कंसी गेहूं के बाली
मोर मांग में लगा दे राजा पीरित लाली ।।

शायद प्रकृति को देखकर लोकगीतों के प्रति आदिवासियों के आवेग स्वतः फूट पड़ते हैं। इन आवेगों की अभिव्यंजना के लिए सामूहिक प्रयास या प्रयोजन की आवश्यकता नहीं पड़ती। दूसरी बात यह है कि संसार की सभी कलाकृतियों की रचना प्रक्रिया पर विचार करने से विदित होता है कि प्रत्येक निर्माण के पीछे एक निमार्ता विशेष का ही हाथ रहता है। लोकगीतों, लोक कथाओं, लोक गाथाओं एवं अन्य विधाओं की रचना के संबंध में भी यह बात सत्य प्रतीत होती है। कालांतर में भले ही हमारे जनजातीय समाज उसे अपने संस्कार एवं रूचि के अनुसार संशोधित, परिवर्तित और परिवर्तित कर एक नवीन स्वरूप को अर्थवत्ता प्रदान करता है। जनजातीय गीत - कविता ना नया होता है और ना पुराना। वह तो हमेशा नया जीवन धारण ही करता रहता है।

हाय डारा लोर गे हे रे
बइठिन हे चिरइया डारा लोर गे हे रे ।।
नइ तो दिखे रुखवा राई नइ तो दिखे गांव संगी नई तो दिखे गांव
नई दिखे संग सहेली सहेली काकर संग म जांव
डार लोर गे हे रे

इन गीतों की सर्जना में पुरुषों के साथ-साथ नारियों का भी बहुत बड़ा योगदान है । बल्कि यह कहा जा सकता है कि जनजातीय गीत-कविता अपौरुषेय है । स्त्रियों द्वारा गाए जाने वाले लोकगीत स्त्रियों के ही मानस की उपज है। गीतों के रचयिता जो भी हों पुरुष अथवा स्त्री दोनों ही बड़े उदारचेता होते हैं ।

बाघ नदिया रे टूरा झन जा मंझनिया रे बाघ नदिया
एके अताल खोर एके पताल खोर
धमधा के ओरे ओर खैरागढ़ के कोरे कोर
बाघ नदिया .....
एक बोझा राहेर काड़ी एक बोझा कांसी
पिंजरा ले मैना बोले मन हे उदासी ओ
तालबुलबुल तालबुलबुल टूरी रांधे रबे केरा साग
तालबुलबुल .....

गीत आदिवासी जनजीवन की अनायास प्रवाहात्मक अभिव्यक्ति है , जो सुसंस्कृत तथा सुसभ्य प्रभावों से बाहर रहकर कम या अधिक रूप में भी आदिम अवस्था में निवास करते हैं । युग - युग की पीड़ा को हम अपने स्वरों में स्थान देते हैं।

हाय रे हाय रे डुमर खोला खोला
छतिया ला बान मारे तरसत हे चोला ।
आमा के पत्ता चुरुस भइगे का या चुरुस भइगे
कोन बैरी के सिखोना मयारु हाय रे मुरुख भइगे

...शेष पृष्ठ 43 पर

आदिवासी न कल हारा है, न आज हारेगा, ना कभी कोई हरा पाएगा...

लेकिन खतरा बढ़ गया है, विकास के नाम पर... ये किसने कहा ?

लोक असर समाचार

जिला स्तरीय विश्व आदिवासी दिवस विकासखंड डौंडीलोहारा के ग्राम तुएगोंदी में मनाया गया। अनवरत बारिश होने के बाद भी गजब का उत्साह आदिवासियों में देखने को मिला। वैसे यह बताना लाजिमी होगा कि तुएगोंदी में विश्व आदिवासी दिवस क्यों मनाया गया। जिसका उल्लेख पाम्पलेट में कुछ ऐसा है, विदित है कि, जामड़ीपाट तुएगोंदी का पारंपरिक सीमा क्षेत्र है। जहां पर 1 मई 2022 को तुएगोंदी एवं आसपास के ग्रामीण जीवा सेवा देकर सामाजिक चर्चा कर रहे थे, तभी कथिततौर पर बालकदास द्वारा बुलाए गए 70-80 गुंडों द्वारा तलवार, राड, पत्थर व डंडे आदि से ग्रामीणों पर हमला करवाया गया, जिससे कई लोगों को चोटें आई। उक्त घटना में अभी तक 17 लोगों को गिरफ्तार कर जमानत पर छोड़ दिया गया, जबकि उन पर 120 बी, 307 (3),(2),(4) जैसी गंभीर धाराएं लगी है। आदिवासी परंपरा एवं सभ्यता पर हमला करने करवाने वाले मुख्य आरोपी बालकदास को अभी तक गिरफ्तार नहीं किया गया है, जिसके विरोध स्वरूप सर्व आदिवासी समाज जिला बालोद द्वारा तुएगोंदी में विश्व आदिवासी दिवस मनाने का फैसला करते हुए नियत तिथि में समारोह का आयोजन किया गया।

इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे पूर्व केंद्रीय मंत्री अरविंद नेताम, वही मुख्य वक्ता थे दिल्ली यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर डॉ लक्ष्मण यादव। अन्य अतिथियों में जनक लाल ठाकुर (अध्यक्ष छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा), बी एस रावटे (अध्यक्ष सर्व आदिवासी समाज प्रदेश कार्यकारिणी), विनोद नागवंशी (प्रदेश मीडिया प्रभारी) यु आर गंगराले (अध्यक्ष सर्व आदिवासी समाज जिला बालोद)। सामाजिक एवं अन्य समाज के उपस्थित जनों में रेवा राम रावटे (उपाध्यक्ष जिला बालोद), शशि भूषण चंद्राकर (जिला संयोजक छत्तीसगढ़ क्रांति सेना जिला बालोद), जीत गुहा नियोगी (प्रदेश अध्यक्ष जन मुक्ति मोर्चा),आदिवासी छात्र संगठन, गोंडवाना स्टूडेंट यूनियन जिला बालोद, गोंडवाना यूथ क्लब डौंडीलोहारा बालोद के साथ जिला के पदाधिकारी प्रेमलाल कुंजाम (जिला प्रवक्ता), तुकाराम कोर्राम (अध्यक्ष ब्लॉक डौंडीलोहारा), सोहन हिडको, तुकाराम कोर्राम, देवलाल भुआर्य, श्याम सिंह नेताम, रविन्द्र नेताम, नीलिमा श्याम सहित कई वरिष्ठ सामाजिक नेता उपस्थित रहे। जंगल के मध्य में स्थित ग्राम तुएगोंदी में कई किलोमीटर तक मूसलाधार बारिश में भीगते हुए पैदल चलकर हजारों की संख्या में आदिवासी जिला स्तरीय विश्व आदिवासी दिवस कार्यक्रम में पहुंचे। मुख्य वक्ता के रूप में डॉ लक्ष्मण यादव आदिवासियों से आह्वान करते हुए अपने उद्बोधन में आदिवासी नायक जयपाल सिंह मुंडा की कहानी से अपनी बात शुरू करते हुए कहा कि संविधान सभा में जयपाल मुंडा का भी योगदान है। उन्होंने संविधान सभा में कहा था हम सिंधु घाटी सभ्यता के वारिस हैं हमें लोकतंत्र मत सिखाइए, आपको लोकतंत्र हमसे सीखने की जरूरत है।

डॉ लक्ष्मण यादव ने अपना उद्बोधन जारी रखते हुए कहा कि नया भारत कैसा बनेगा इस किताब का नाम है संविधान। क्या आप जानते हैं संविधान को? क्या आपको पता है संविधान से हमें अधिकार मिला है कि कोई भी आप के ग्रामसभा की अनुमति के बिना आप की जमीन

... शेष पृष्ठ 43 पर

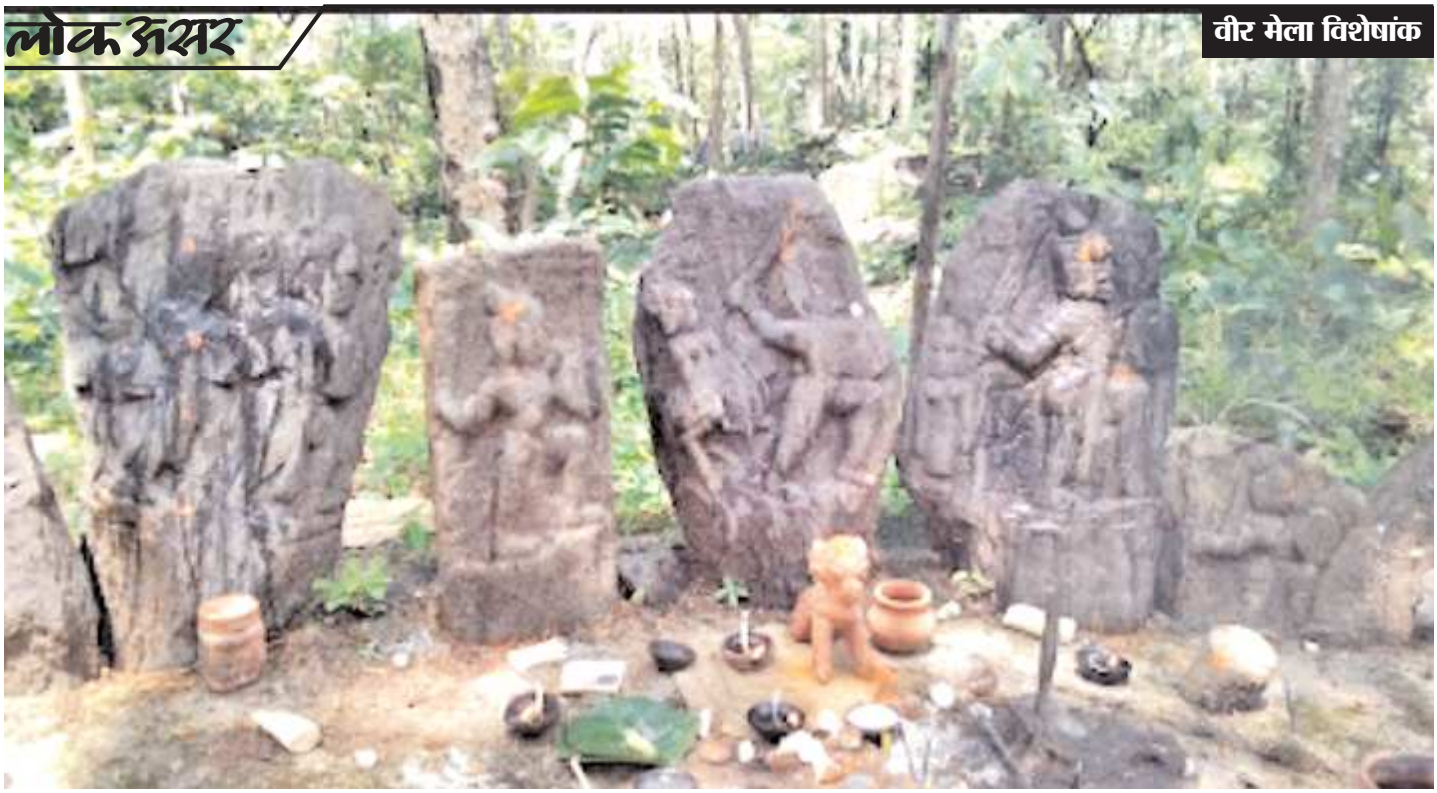

लिंगनगढ की लिंगो मड़िया

उद्देश्य... गोंडवाना के ऐतिहासिक धरोहर, गोंडियन संस्कृति से जुड़ी इतिहास समाज तक पहुंचाना ..!!

संकलन :- महेंद्र कुमार नयताम/ चेम सिंह मरकाम

लिंगनगढ़ शब्द की ध्वनि सुनते ही,शरीर में एक अतिरिक्त ऊर्जा का संचार होने लगा,पता

नही इस जगह के बारे में कुछ वर्ष पूर्व तक मुझे कुछ भी जानकारी नही था ! हालांकि बचपन से ही इस जगह के करीब के गांवों में आता जाता रहा हुं ! परंतु इस जगह पहली बार जब वर्ष-दो हजार ग्यारह में लिंगो-जत्रा का आयोजन हुआ तब आना हुआ ! यहां आकर सगा समाज के युवाओं, बुजुर्गो, बुद्धजीवियों से मिलने का अवसर मिला ! गोंडियन संस्कृति से जुड़ी बहुत कुछ देखने सुनने और सीखने मिला ! महसूस हुआ जैसे लिंगनगढ के इस घने जंगलों में गोंडियन संस्कृति से जुड़ी कई अनसुनी कहानी,अनसुलझी राज दबी पड़ी है ! प्रकृति के सुरम्य गोद में बसे लिंगनगढ़ पहाड़ी की चोटी से चारों ओर की मनोरम परिदृश्य निहारते रहे ! फिर मन में विचार आया कि क्यूं ना जानकार बुजुर्गो से चर्चाकर लिंगनगढ़ की कहानी को लिपिबद्ध किया जाए !

लिंगनगढ की एतेहासिक पृष्ठभूमि ... छत्तीसगढ़ प्रांत के जिला-राजनांदगांव तहसील-डोंगरगढ़ में स्थित है ! जिला मुख्यालय से दूरी

लिंगनगढ की गुफा पेन मडिया

लगभग 55 किमी.एवम ब्लाक मुख्यालय डोंगरगढ़ से उत्तर दिशा में 11 किमी.है !

मैकल पर्वत माला की खूबसूरत वादियों में बसा -नार(गांव)कोहकट्टा-खुसीपार-लोहझरी-कन्हारगांव के घने जंगलों की बीच स्थापित लिंगनगढ का पेनठाना,पूर्व-पश्चिम से पहाड़ी दक्षिण में विशालकाय झील और खाई तथा उत्तर दिशा में घने जंगलों से घिरा हुआ है ! सैकड़ों साल पहले यहां गोंड कबिलाई बस्ती नगर हुआ करता था ! जिसका प्रमाण आज भी कोटा परकोटा पत्थर के दीवार मूर्तियां,बाजार के अवशेष के रूप में मौजूद है ! अनगिनत पर्वतों की श्रृंखला इस क्षेत्र को मैकल पर्वत माला का हिस्सा बनाता है ! इस पर्वत से लगे डोंगरगढ़ नगर है जिसके दक्षिण में दाई बमलाई की पहाड़ी,नगर के मध्य दाई दंतेवाडिन पहाड़ी (हगरी डोंगरी), उत्तरी-दक्षिणी में चंद्रगिरी (वर्तमान में जैन मंदिर निमार्णाधीन), प्रज्ञागिरी पहाड़ी (महात्मा गौतम बुद्ध की तीस फिट मूर्ति स्थापित), पूर्व में क्रास पहाड़ी (यीशु मसीह का चर्च)स्थित है !

लिंगनगढ़ के इस पवित्र भूमि पर कभी किसी लिंगो का गढ़ ठाना हुआ करता था, जहां से कोया गणराज्य में समस्त जीव जगत कल्याण की लिए कोया पुनेम का संदेश प्रसारित करते थे! स्थानीय क्षेत्र के गोंड समाज में प्रचलित गोंडी पाटा और किवदंती के अनुसार प्राचीन गोंडवाना कालीन महान संगीतज्ञ लक्षणजति और नर्तका कंवलावती की अमर प्रेम गाथा लिंगनगढ एवम् डोंगरगढ़ तक फैली हुई थी !

नार-लोहझरी.... लिंगनगढ के पश्चिम दिशा में लोहझरी नामक गांव है ! बताया जाता है,बहुत पहले इस गांव के घने जंगलों में लोह अयस्क के अवशेष मिला करते थे ! ऐसी मान्यता है की लिंगनगढ़ में जब बस्ती हुआ करता था तब कच्चे लोहे से औजार का निर्माण किया जाता था ! जिसकी अवशेष इस क्षेत्र के जंगलों में कहीं कही मिलती है ! इसलिए नार-गढ़ी करते समय इस गांव का नाम लोहझरी रखा गया !

लिंगनगढ का लिंगों पेन... अठारह लिंगों में से एक रंगपेन लिंगों कोरेटी गोत्र धारक बस्तर से यहां आया हुआ था ! अपने शिष्यों को कोया पुनेम के साथ युद्ध कला की भी ज्ञान बताते थे ! यहां पत्थर की मूर्तियों में युद्ध कौशल का चित्रण आसानी से देखा जा सकता है !

लिंगनगढ की गढ़माता...

लिंगनगढ़ से 2 किमी की दूरी में गढ़माता का ठाना है जो ऊपर से खुला है किसी प्रकार की छांव नही है ! गढ़माता खुले में ही रहना चाहती है ! इस गांव में जब कभी बारिश नही होती है फसल सूखने लगते है, गांव वाले एक दिन त्योहार मनाकर गढ़ माता में जाकर पेड़ की हरे टहनियों से मडिया बना देते है और ये माता को पसंद नहीं इसलिए ओ नाराज होकर बारिश करा देती है ! जो आज भी प्रचलन में है ! खुसीपार खुर्द की पेन ठाना.. यहां की खेरो मडिया में लिंगों की तंद्रीय ध्यान मुद्रा में बैठे शिला मौजूद है,जंगल के ऊपरी भाग में जेठू देवता,बम्बरपाठ का ठाना है !इस प्रकार चारों दिशाओं में हरदीपानी,सोनपानी,गातापानी, गातापथरा, जलकैना,तेलीनदाई, बरनारा का गाता पीढ़ा,और सोनपाठ नामक स्थान आज भी मौजूद है !

निंगो बांध.. लिंगनगढ पहाड़ी के नीचे पूर्वी-दक्षिणी भाग में विशालकाय झील है जिसे स्थानीय लोग निंगों बांध कहते हैं ! बहुत पहले यहां प्राकृतिक झरना नदी नीचे आकर छोटा झील बना जिसे बइगा दहरा कहते थे ! जिसके किनारे नार (गांव) बस्ती हुआ करता था कालांतर पश्चात इस झील का विस्तार हुआ बांध रखा गया ! जिससे बस्ती,पानी में डूब जाने के कारण यहां बसे लोग अन्यत्र चले गए ! परन्तु उनके द्वारा नारगढ़ी के समय स्थापित किए गए पेन ठाना बतौर प्रमाण आज भी मौजूद है ! लिंगोंबांध का पानी सूखने पर बस्ती का अवशेष आज भी देखने को मिलता है ! यहीं पर रानीगंज नाम का एक छोटा बस्ती है ! जिसे क्षेत्र के राजा की रानी के नाम से रखा गया था ! रानीगंज की प्राचीन बाजार काफी प्रसिद्ध थी ! इस क्षेत्र में एक बरतिया भर्री नाम का स्थान है जो राजा-रानी के विवाह स्थल के नाम से जाना जाता है! रानीगंज की आखेट क्षेत्र भी काफी प्रसिद्ध हुआ करता था ! लिंगनगढ़ के क्षेत्र में झील डंगोरा बांध भी है जो यहां की मनोरम दृश्य को और भी सुशोभित करती है !

लिंगनगढ की प्राचीन मूर्तियां अपने आप में एक अद्भुत वास्तुकला का बेमिसाल उदाहरण है ! जानकारी के अनुसार एक बार बोदकू नामक व्यक्ति (बदला हुआ नाम) यहां की कुछ मूर्तियां चोरी कर ले गया तो वह अंधा हो गया ! फिर बाद में उसे पुनः स्थापित करके सेवा अर्जी क्षमा याचना करने पर उसकी आंख ठीक हो गया ! इस जगह बसाहट,मूर्तियों की स्थान बनावट यह दर्शाता है ! कि यह नगर बस्ती सभी दिशाओं से रावपेन-नार व्यवस्था से किलेबंद था !

आमनेर नदी का उद्गम ...

लिंगनगढ़ मैकल पर्वतमाला आमनेर नदी का उद्गम स्थल है ! यहां से एक नदी निकलकर घोटिया के समीप के पहाड़ों के बीच से होते हुए खैरागढ़ में मुस्का और पिपरिया नदी में जाकर मिलती है ! जो आमनेर नदी के नाम से जाना जाता है ! ये नदी आगे चलकर दुर्ग जिला से ग्राम कोडिया सगनीघाट पर शिवनाथ नदी में विलय हो जाती है ।

लिंगनगढ़ जत्रा.... बहुत पहले से ही लिंगनगढ की पेन ठानाओं में आसपास गांव के लोग सेवा अर्जी करते आ रहे है ! लेकिन वर्ष-दो हजार ग्यारह में गोंडवाना समग्र क्रांति आंदोलन के महानायक दादा हीरासिंह मरकाम के मार्गदर्शन में आठ-दस गांव -कन्हारगांव, लोहझरी, खुसीपार, घोलारघाट, घोटिया, तोतलभर्री, कोहकट्टा, ढीकुड़िया, भरीटीला,

चौथना, बछेराभांठा, लेडिजोब, पीपरखार, लतमर्रा, कलकसा, देवकट्टा, कांदेसरा, शिवपुरी, रानीगंज, संडी के ग्रामीणों द्वारा लिगनगढ़ सेवा समिति का निर्माण कर प्रथम बार लिंगों जत्रा का आयोजन तात्कालिक तालुका मुसेर्नाल लक्ष्मणसिंह उइके निवासी ग्राम-घोटीया एवम हेमंत कुमार ध्रुवे मुसेर्नाल गोंडवाना युथ क्लब डोंगरगढ़ के नेतृत्व में किया गया ! आज भी प्रतिवर्ष धनेगांव की कलिया दाई- पहांदि पारी कुपार लिंगो-हिरासुका पाटालीर की कछारगढ़ जत्रा के पूर्व माघ महीना के उजियारी पक्ष में दूज से पंचमी तक तीन दिवसीय लिंगनगढ़ जत्रा का आयोजन किया जाता है ! जहां पर बस्तर की आंगा पेन को भी आमंत्रित किया गया था !

मुठवा धनित्तर,महित्तर दवगण लिंगों गोंगों

प्राचीन काल से ही आयुर्वेद की खोज हमारे पूर्वजों द्वारा किया जा चुका है ! आदि मुठ्वा-धनित्तर,महित्तर और दवगन लिंगों ये तीनों लिंगों द्वारा अपने शिष्यों को जड़ी बूटी औषधियों का ज्ञान दिया करते थे ! इसलिए इनके याद में माह-भादो उजियारी पंचमी के दिन विशेष धनित्तर गोंगों के रूप मनाया जाता है ! जिसे अभी ऋषि पंचमी के नाम से जाना जाता है ! इस दिन आसपास के समस्त बइगा, भूमका, गायता लिंगनगढ की घने जंगलों में आकर औषधि जड़ी बूटियों-बूटी, कंद-मूलकी खोज करतें है, क्यों की यहां की जंगलों में बेहिसाब दुर्लभ जड़ी बूटी औषधियों का भंडार है ! गायता लोग अपने शिष्यों को आज ही के दिन इन जड़ी बूटियों की पहेचान कराते है ! फिर शाम को इन जड़ी-बूटी,कंद-मूल से औषधि बनाने और उपयोग विधि की जानकारी देते है ! सभी भुमक बैगा गायता मिलकर मुठवा धनित्तर,महित्तर और दवगण लिंगों की विशेष गोंगों सेवा अर्जी करतें है ! इनमें से एक लिंगों महित्तर (माहरू भूमका) जो की गढ़-लांजी के पोय (राजा)-भूरा भुमका के जेष्ठ पुत्र-भीमा और सबसे छोटी पुत्री-खैरो (वैधशास्त्रीणी) की गुरु थे ! जिसका ठाना आमुरकोट हुआ करता था ! संभू के मुंद-शूल-सर्री और लिंगों दर्शन के मूल तत्व कोया पुनेम के मोंद वेरची...

सुयमोंद आम्ट, सुयमोंद सिम्ट !
तमवेडची आम्ट,रेक्वेडची किम्ट !
सगा तम्मू आम्ट,सगा पारी बिम्ट !
सुयवंके आम्ट,सुयवानी वनकाट !
सेवकाया आम्ट,सगा सेवा किम्ट !

.....सेवा संदेश को समस्त भुमका गायता,गण-वेन तक पहुंचा रहें है सभी भुमकाओं को मेरा सेवा जोहार !

प्रचलित किवदंती.... लिंगनगढ पहाड़ी के पूर्व दिशा में एक विशालकाय खाई है ! ऊपर से नीचे की ओर आने पर ऊबड़ खाबड़ खतरनाक मोड़ है ! जिसके बीचो-बीच आने पर दो पर्वतों के बीच से एक झरना निकलकर आता है,मधुर झर-झर झरने की ध्वनि जो बेहद ही खूबसूरत लगता है ! पेनठाना के आगे आकर बावलीनुमा बन जाता है जहां की पानी बिल्कुल स्वच्छ होता है इस कुंड का पानी कई लोग अपने घर ले जाते है क्योंकि यह पवित्र जल जंगलों में औषधियों से होकर आया हुआ होता है ! इस पेन ठाना में भूमकाओं द्वारा समय समय पर सेवा अर्जी दी जाती है ! यहां एक प्राचीन प्राकृतिक गुफा प्रतीत होता है ! जिसकी दरवाजा अभी बंद है ! रहस्ययी गुफा के बंद दरवाजा के पीछे की खोज-शोध अभी तक नही किया जा सका है ! निश्चित ही कोई अलौकिक शक्ति विद्यमान होगा ! परंतु प्रचलित स्थानीय मान्यता के अनुसार प्राचीन समय में कोई भी राहगीर यहां आते थे,तब उनके लिए भोजन व अन्य सुविधा उपलब्ध हो जाया करते थे ! कालांतर में कुछ ऐसी घटना हुई या दैवीय प्रकोप से ये सब बंद हो गया ! बुजुर्ग लोग बताते है की बहुत पहले लिंगनगढ़ की घनाघोर जंगलों में बसंत पंचमी की उजयारी रात से नंगाडो की धुन हाथी और घोड़ों के चीखें आवाज सुनाई देते थे ! फिलहाल इस जंगल में अभी हाथी, घोड़ा नही है किन्तु बाघ, भालू, तेंदुए, लोमड़ी लकड़बघा, हिरण, जंगली सूअर, मयूर व अन्य जानवर पक्षियां मौजूद है ! मोर-मोरनी,और पंछियों की सुमधुर कलरव ध्वनि जंगल की खूबसूरती पर और चार चांद लगाती है !

प्राकृतिक संसाधनों से भरा-पूरा यहां की जंगलों में खनिज संपदाओं के साथ काफी मात्रा में फलदार पेड़ महुए, सागोन, चार, तेंदू, हर्रा, बहेड़ा, बांस और भी अन्य पेड़ है जो इस क्षेत्र के ग्रामीणों की आजीविका का साधन है !

अत्यधिक पेड़-पौधे घने जंगल होने के कारण यहां की पर्यावरण काफी संतुलित होती है ! लेकिन कभी आप ग्रीष्म ऋतुओं के रात्रि में इस जंगल के आसपास से गुजरेंगे तो पहाड़ों में विशालकाय आग की लपटे दिखाई देगी,मानों कोई ज्वालामुखी की लावा निकल रही हो ! ये आग बांस की पेड़ो में आपसी घर्षण के कारण लगा होता है ! जो दिखने बेहद खतरनाक लगता हैं ! इस गोंडवाना कालीन धरोहर को संरक्षित करने गोंडवाना युथ क्लब,तहसील गोंड समाज और लिंगनगढ़ सेवा समिति संकल्पित है ! आइए हम सब मिलकर इस कार्य में योगदान सहयोग करें ! उपरोक्त स्वतंत्र लेख स्थानीय बुजुर्गो से चर्चाकर और स्वअध्ययन तर्क के आधार पर लिपिबद्ध किया गया है !

सगाजनों आप किसी को लिंगनगढ से जुड़ी कोई भी एतेहासिक प्रमाण, किस्सा कहानी के बारे में जानकारी हो तो जरूर बताएं !

सोन पेड़ सरगी

सरगी पेड़ का बस्तर में एक महत्वपूर्ण स्थान है इसे सोन वृक्ष की संज्ञा दी गई है। बहुतायत में पाया जाता है। सरगी पेड़ के छाल, पत्ते, तने और फल का उपयोग बस्तर के आदिवासियों द्वारा किया जाता है।

सरगी पत्ते का उपयोग

सरगी के पत्ते से दोना पत्तल बनाया जाता है इसमें खाना खाने का मजा ही कुछ और होता है सबसे सुविधाजनक बात तो यह होता है कि उपयोग के बाद इसे फेंका जाता है, जो स्वतः नष्ट हो जाते हैं इनसे पर्यावरण को भी हानि नहीं पहुँचती। बस्तर क्षेत्र में ग्रामीणों के द्वारा दोना पत्तल बनाया जाता है इसे बनाने का काम किसी समुदाय विशेष से नहीं जुड़ा है इसे किसी भी ग्रामीण के द्वारा अपनी आवश्यकता के अनुसार अपने कार्य के उपयोग के लिए बनाये जाते है। जैसे बस्तर में कई पारम्परिक त्यौहार, मृत्यु भोज एंव शादियों और भी कई अनेक प्रकार के कार्यक्रम होते है जिनमें यह सरगी पत्ता से बनाई गई दोना पत्तल का उपयोग किया जाता है।

दोना पत्तल बनाना बहुत ही आसान होता है दोना पत्तल बनाने में सरगी पेड़ के पत्ते और बांस की महीन तीलियों जिसे सिलक कहा जाता है इसका प्रयोग किया जाता है। एक दोना बनाने में लगभग तीन पत्ते एंव पत्तल बनाने में लगभग सात पत्ते को उपयोग में लाया जाता है। दोना पत्तल अपने आवश्यकता के अनुसार छोटा एवम बड़ा बनाया जाता है जिसमें पत्ते की संख्या कम या ज्यादा होता है। दोना पत्तल को बस्तर के हाट बाजारों में बेचने का कार्य भी किया जाता हैं।

दोना पत्तल के प्रकार

1: पतरी
2: दोना
3: डोबली
4: चिपडी

सरगी फल का उपयोग

सरगी के फल को बस्तर के ग्रामीणों द्वारा एकत्रित किया जाता है। इसके फल से तेल, साबुन बनाया जाता है। साथ ही दवाई के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। इसके तेल को दिया जलाने खाना बनाने और हाथ पैर में लगाने के लिए प्रयोग किया जाता है। सरगी साबुन को कपड़ा धोने तथा नहाने के लिए उपयोग किया जाता है इस साबुन में तेल होता है इससे नहाने से शरीर में रूखापन नही आता और कपड़ों के रंग खराब नही होते।

दवाई के रूप में सरगी

सरगी के फल को राख में डालकर पानी के साथ उबाला जाता है ताकि उसका कसैलापन दूर हो जाए फिर धूप में सुखा कर खाया जाता है। इसे पेड़ दर्द और पेट खराब होने की स्थिति में प्रयोग किया जाता है।

सरगी के टहनी का उपयोग

वर्तमान समय में ब्रश का प्रचलन है लेकिन आज भी इसके टहनी का उपयोग गांव में लोग दांत साफ करने के लिए करते है। सरगी दातुन का स्वाद काफी अच्छा होता है जो माउथ फ्रेशनर की तरह ही काम करता है। बस्तर का जीवन जंगल के बिना अधूरा है। जंगल और जंगल से प्राप्त हर एक वस्तु बस्तर के लोगो के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

महापंचायत में निकल कर आई आदिवासी समुदाय की 56 समस्याएँ

वीर मेला समिति राजा राव पठार द्वारा 9 दिसंबर 2020 बुधवार को संरक्षक अरविंद नेताम की अध्यक्षता में समाज के सम्मानीय पदाधिकारियों एवं समाज प्रमुखों की उपस्थिति में महापंचायत आहूत की गई। जिसमें निम्नानुसार निर्णय लेते हुए पूर्व वर्ष लिए गए निर्णय पर भी चर्चा कर प्रस्ताव पारित किया गया जो निम्नानुसार है–

01. पेसा कानून पर विस्तार से चर्चा कर महापंचायत द्वारा निर्णय लिया गया कि 10 जनवरी 2021 को रायपुर में बैठक आयोजित कर छत्तीसगढ़ शासन को पेसा कानून ड्राफ्ट को पारित कराने हेतु सौंपा जावेगा।

02. राष्ट्रीय जनगणना 2021 में आदिवासी धर्म कालम के मांग हेतु सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया।

03. राम वन गमन पथ रैली का विरोध पूरे प्रदेश स्तर पर किए जाने का निर्णय लेते हुए ग्राम पंचायत के प्रतिनिधियों एवं ग्राम वासियों को अवगत कराने राम वन गमन रैली को अपने अपने गांव में प्रवेश न दिया जावे और अपने ग्राम का मिट्टी ना ले जाने देने हेतु निर्णय लिया गया। साथ ही इसकी सूचना सभी जिला अध्यक्षों को पत्र के माध्यम से दिया जावे।

04. पाटेश्वर धाम तुएगोंदी ग्राम पंचायत तुमड़ीकसा विकासखंड डौंडीलोहारा जिला बालोद से प्राप्त आवेदन पर चर्चा करते हुए महापंचायत में निर्णय लिया गया कि प्रदेश स्तरीय सर्व आदिवासी समाज का अगला बैठक पाटेश्वर धाम तुएगोंदी में आहूत किया जावे। साथ ही डीएफओ बालोद के द्वारा पाटेश्वर धाम में किए गए अवैध कब्जा के खिलाफ जो वैधानिक कार्य किया गया है। उसकी महापंचायत द्वारा भूरी भूरी प्रशंसा करते हुए उनके स्थानांतरण रोके जाने हेतु उच्चाधिकारियों को अनुरोध करने का निर्णय लिया गया।

05. नक्सल पीड़ित परिवारों से प्राप्त आवेदन पर चर्चा करते हुए महापंचायत द्वारा तय किया गया कि नक्सल पीड़ितों के व्यवस्थापन करने हेतु भूमि प्रदान करने तथा नक्सल उत्पीड़न के निराकरण हेतु जगदलपुर में फास्ट ट्रैक कोर्ट स्थापना प्रारंभ करने की मांग किया जावे। इस हेतु शासन से सर्व आदिवासी समाज द्वारा मांग पत्र दिए जाने का फैसला हुआ है।

06. कुकरेल विकासखंड के संबंध में नगरी तहसील के कुकरेल को तहसील का दर्जा दिए जाने का प्रस्ताव शासन द्वारा है जिसे तहसील बनाने में समाज को कोई परेशानी नहीं है, लेकिन उसे विकासखंड ना बनाया जाए। जिससे आदिवासी परिवार को क्षति हो। क्योंकि यह क्षेत्र पांचवी अनुसूची के अंतर्गत है। इसमें उप तहसील कुकरेल में मगरलोड ब्लाक का हल्का नंबर विलुप्त कर धमतरी तहसील का हल्का नंबर एवं मगरलोड का ट्राइबल क्षेत्र सिंगपुर को जोड़ें जाने का अनुरोध महापंचायत छत्तीसगढ़ शासन से करेगी।

07. नगरीय क्षेत्रों में जमीन पट्टा के नाम से राशि वसूली के विरोध में– छत्तीसगढ़ में पांचवी अनुसूची क्षेत्रों में संचालित नगरी प्रशासन, नगर पंचायत / नगर पालिका/ नगर निगम में शासकीय जमीन का पट्टा देने के नाम पर कई वर्षो से निवासरत आदिवासियों से शुल्क वसूली की जा रही है। जो कि असंवैधानिक है। चूंकि प्रदेश के 37 नगरीय निकाय क्षेत्रों में संविधान के अनुच्छेद 243 (य) (ग) के तहत असंवैधानिक रूप से संचालित है। ऐसे में उन स्थानों पर पट्टा के नाम पर शुल्क वसूली गैरकानूनी है। महापंचायत द्वारा सर्वसम्मति से इस पर तत्काल समीक्षा करते हुए रोक लगाने की राज्य शासन से मांग करने का निर्णय लिया गया है।

08. आदिवासी महापंचायत में गत वर्ष 2019 में सर्वसम्मति से आदिवासी समाज के द्वारा 46 बिंदुओं पर लिए गए प्रस्ताव के संबंध में शासन को मांग पत्र दिया गया था। जिस पर अभी तक शासन प्रशासन के द्वारा कोई सार्थक कार्यवाही नहीं किया गया है। जिससे समाज में असंतोष व्याप्त है तथा यह भी कहा गया है कि समाज के प्रतिनिधि मंडल के द्वारा इस वर्ष 2020 महापंचायत द्वारा लिए गए निर्णय एवं 2019 महापंचायत के 46 सूत्रीय मांग को शासन प्रशासन को पुनः अवगत कराया जावे। मांग नहीं सुनने पर सर्व आदिवासी समाज कठोर निर्णय लेकर आंदोलन करने के लिए बाध्य होगा। जिसकी जिम्मेदारी शासन प्रशासन की होगी।

09. महापंचायत द्वारा गंभीर चिंता व्यक्त की गई.कि फर्जी जाति प्रमाण पत्र के आधार पर शासकीय सेवा करने वालों के खिलाफ कार्यवाही हेतु न्यायालय स्तर पर जो कार्रवाई हो रही है, वह पर्याप्त नहीं है। इसके लिए समाज की ओर से इंटर विनर (थर्ड पार्टी) बनकर कोर्ट में सभी प्रकरणों पर अधिवक्ता नियुक्त करने और सरकार को सलाह देने के लिए जानकर व्यक्तियों को नियुक्त करने का निर्णय लिया गया।

10. नक्सल समस्या का स्थाई समाधान हेतु शांति वार्ता के संबंध में चर्चा हुई जिसमें बस्तर में नक्सल समस्या का स्थाई समाधान हेतु विस्तृत चर्चा कर अरविंद नेताम (पूर्व केंद्रीय मंत्री) को महापंचायत द्वारा जिम्मेदारी सौंपी गई। यहां पंचायत ने सर्वसम्मति से निर्णय लेते हुए नक्सलियों और सरकार के बीच चर्चा हेतु स्थाई समाधान के लिए माननीय नेताम जी के नेतृत्व में कमेटी गठित कर तत्काल पहल शुरू की जावे। जिससे नक्सली के नाम पर मरने वाले निर्दोष आदिवासियों को बचाकर देश की मुख्यधारा से जोड़ा जा सके।

11. लोगों की आस्था लगातार वीर मेला के प्रति बढ़ रहा है। इसलिए वीर मेला क्षेत्र राजाराव पठार के विकास हेतु मांग पत्र शासन प्रशासन को भेजा जावे।

12. शासन प्रशासन से वार्ता हेतु समिति गठित की गई जिसमें अरविंद नेताम, सोहन पोटाई, नवल सिंह नेताम, बीएस रावटे, विनोद नागवंशी, प्रकाश ठाकुर एवं प्रदेश के अन्य गणमान्य समाज प्रमुखों को भी सम्मिलित करने का निर्णय लिया गया।

मेला राजाराव पठार महापंचायत 9 दिसंबर 2019 को पारित किया गया था

13. छत्तीसगढ़ में पांचवी अनुसूची प्रकोष्ट का गठन किया जाये। जिसके माध्यम से मुख्यमंत्री द्वारा विशेष रूप से पेसा कानून वन अधिकारों की मान्यता अधिनियम तथा जनजाति उप योजना (क) की प्रत्येक माह में समीक्षा हो ।

14. पांचवी अनुसूची क्षेत्र में नगरीय निकायों को जो कि संविधान के अनुछेद 243 (य) (ग) के अंतर्गत असंवेधानिक है, को पेसा कानून बनने तक तत्काल भंग किया जाये तथा ऐसे क्षेत्रों को ग्राम पंचायत में पुनः परिवर्तित कर पेसा कानून के अंतर्गत लाया जाये साथ ही ऐसे क्षेत्रों में गैर अनुसूचित वर्ग को हस्तांतरित सभी भूमि को अनुसूचित जनजाति वर्ग को वापस की जाये।

15. राज्य में काफी सारे अधिकारी जाति प्रमाण पत्र जांच में फर्जी पाए जाने के बाद भी पद पर बने हुए है। ऐसे लोगो को तत्काल सेवा से मुक्त करते हुए कानूनी कार्यवाही की जाये।की किसी भी भूमि को जिला के कलेक्टर अथवा अन्य कोई अधिकारी द्वारा गैर अनुसूचित वर्ग को हस्तांतरित की गयी है उसकी जांच करवाई जाये तथा ऐसी भूमि भू- राजस्व संहिता की धारा 170 (ख) (2-क) के अनुसार वापस की जाये।

17. ग्राम सभा को पांचवी अनुसूची क्षेत्रों में एक निगमित निकाय का दर्जा देते हुए स्वयं का बैंक खाता संचालित करने की व्यवस्था दी जाये।

18. अनुसूचित क्षेत्रों में नगरी विकासखंड के जैसे मोहल्ला, मजरा, टोला, पारा स्तर पर ग्राम सभा का गठन किया जाए।

19. अनुसूचित क्षेत्र में सभी गौण खनिज के विदोहन का अधिकार अनिवार्य रूप से ग्राम सभा अथवा ग्राम सभा की सहमति उपरांत अनसूचित जनजाति की ही सहकारी समिति को दिया जाये।

20. सभी गौण वनोपज, जिसमे बांस भी शामिल है, का मालिकाना हक ग्राम सभा को दिया जाये जिसमे वन विभाग एवं लघु वनोपज सहकारी समिति का कोई भी हस्तक्षेप न हो।

21. अनुसूचित क्षेत्र में, विशेष कर के नगरीय क्षेत्रों में, किसी भी तरह के ब्याज पर लेन-देन की प्रक्रिया को नियंत्रित किया जाये। अनुसूचित क्षेत्र में किसी भी तरह का ऋण ग्राम सभा की अनुमति के बाद ही दिया जाए।

22. वन विभाग द्वारा अपने वन मंडल अनुसार जो कार्य योजना (वर्किंग प्लान) बनाया गया है जिसके अनुसार अगले 10 वर्ष में जिस भी गाँव के जंगल में कूप कटाई की जानी है। उसके लिए वृक्षों का चिन्हांकन (मार्किंग)करने से पहले तथा वृक्षों की कटाई शुरू करने से पहले पेसा कानून और वन अधिकार मान्यता कानून के अनुसार ग्राम सभा का अनुमोदन लिया जावे। साथ ही ऐसी कूप कटाई से प्राप्त लकड़ी की नीलामी से होने वाली आय की राशि, जो अभी मात्र 20 प्रतिशत है, को पूरा 100 प्रतिशत ग्राम सभा को हस्तांतरित की जावे जो की वन अधिकार मान्यता कानून 2006 के नियम 4 (1)(द्ध) के अंतर्गत गठित समिति के नियंत्रण में हो।

23. सम्पूर्ण पांचवी अनुसूची क्षेत्र में वन अधिकार मान्यता अधिनियम 2006 के अंतर्गत सामुदायिक वन संसाधन अधिकार (Commu»»fity Forest Resource तथा सामुदायिक अधिकार Rights) तथा सामुदायिक (Commu»»fity Rights) दिए जाये तथा उसके अनुसार राजस्व तथा वन विभाग के बंदोबस्त तथा निस्तार रिकॉर्ड दुरुस्त किये जाये।

24. वन ग्राम को राजस्व ग्राम में परिवर्तित करने की प्रक्रिया युद्ध स्तर पर पूर्ण करवाई जाये।

25. टाइगर रिजर्व क्षेत्र में जहाँ पर अनुसूचितजनजाति की बाहुल्यता है, जिसमे सीतानदी- उदती, इन्द्रावती एवं भोरमदेव अभ्यारण्य क्षेत्र भी शामिल है, से गावों के विस्थापन पर पूर्णतः रोक लगाई जाये। साथ ही सीतानदी- उदंती बाघ अभ्यारण्य क्षेत्रों के 34 गाँव का विस्थापन निरस्त किया जाए।

26. अनुसूचित क्षेत्रों से किसी भी अनुसूचित जनजाति के व्यक्ति को विस्थापित करने से पहले ग्राम सभा से अनिवार्य रूप से अनुमति ली जावे एवं विकास कार्यो के लिए किसी को विस्थापित न किया जावे।

27. सलवा जुडूम के समय बस्तर से विस्थापित लोग जो आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र तथा ओडिशा में निवासरत है उन्हें वापस लाने हेतु ठोस प्रयास किये जाए तथा इसके लिए स्थानीय आदिवासी व्यक्तियों की ही उच्च अधिकार प्राप्त समिति बनायी जाए जो इस हेतु कार्य को समन्वित करे।

28. वन अधिकार मान्यता अधिनियम 2006 के अंतर्गत मान्य की गयी कोई भी व्यक्तिगत वन अधिकार की भूमि अगर शासन द्वारा अधिग्रहित की जाती है तो उसका राजस्व भूमि की तरह ही अनिवार्यतः उचित मुआवजा दिए जाने हेतु प्रावधान किया जाए।

29. राज्य शासन द्वारा आदिवासी व्यक्तियों के खिलाफ चल रहे न्यायिक प्रकरणों की जांच के लिए बनायीं गयी माननीय पटनायक समिति में अनुसूचित जनजाति के समाजिक प्रमुखों को भी शामिल किया जाए।

30-. NÔtio»»fÔl Mi»»ferÔl Developme»»ft CorporÔtio»»f (NMDC) द्वारा संचालित बैलाडीला की खदान से लौह अयस्क का परिवहन सिर्फ रेल मार्ग से किया जाए तथा ट्रक तथा अन्य मार्ग से परिवहन पूर्णतः प्रतिबंधित किया जाए।

31. बैलाडीला लौह अयस्क के निक्षेप क्रमांक 13 एवं अन्य निक्षेपों का संचालन सीधे तौर पर ठटऊ तथा उटऊ द्वारा किया जाये। Mi»»fe-Developer-cum-OperÔtor (MDO) से कोई भी कार्य किसी भी निक्षेप में नहीं करवाया जाये।

32. NMDC का मुख्यालय हैदराबाद से बस्तर में स्थानांतरित किया जाए।

33. अनुसूचित क्षेत्र में सभी तरह के बड़े खनिज, जैसे कोयला तथा लौह अयस्क, खनन किसी भी तरह से निजी हाथों में दिए जाने पर पूर्णतः रोक लगायी जावे। अनुसूचित क्षेत्र में सभी खनिज खदान सिर्फ शासकीय निकायों अथवा अनुसूचित जनजाति द्वारा

संचालित निकायों के माध्यम से किये जाए, नगरनार इस्पात सयंत्र का निजीकरण किसी भी हाल में न हो।

34. बड़ी खनन परियोजनाओ जैसे लौह अयस्क, कोयला, इत्यादि की बिक्री से प्राप्त होने वाले मुनाफे की राशि, भूरिया समिति की अनुशंसा अनुसार 26 प्रतिशत निवेशकताओं, 50 प्रतिशत ग्राम सभा एवं 24 प्रतिशत परियोजना से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित व्यक्ति कोसीधे हस्तांतरित किये जाए।

35. अनुसूचित क्षेत्रों में कोई भी परियोजना, जिसमे बाँध और खनन परियोजना शामिल है , को शुरू करने से पहले उससे प्रभावित होने वाली प्रत्येक ग्राम सभा से सहमति ली जा तथा कोई भी नयी परियोजना तभी शुरू की जावे जब पूर्व में संचालित परियोजना सेलाभ ले पाना संभव नहीं हो। उदहारण हेतु रावघाट परियोजना से खनन शुरू करने से पहले बैलाडीला की खदान से भिलाई इस्पात सयंत्र को आपूर्ति सुनिश्चित किया जाए।

36. अनुसूचित जनजाति, विशेष कर विशेष पिछड़ी जनजाति समूह (PVTG), के बैकलॉग के पदों पर भर्ती जल्द से जल्द पूर्ण की जावे।

37. राज्य के आदिम जाति तथा अनुसूचित जाति विकास विभाग में सभी पद अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति तथा अन्य पिछडा वर्ग के व्यक्तियों के लिए ही आरक्षित रखे जाये।

438. अबूझमाड़ में पूर्व की तरह इनर लाइन परमिट लागू किया जाये तथा बाहरी व्यक्तियों के वहां पर प्रवेश को नियंत्रित करने के लिए संविधान सम्मत कानून बनाया जाये।

39- राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों में बसाये गए बांग्लादेशी शरणार्थियों को गैर अनुसूचित क्षेत्रों में बसाया जाये तथा अवैध रूप से आये घुसपैठियों को चिन्हांकित कर उन्हें उनके मूल देश वापस भेजा जाये तथा उनके कब्जे की जमीन को अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों को वापस सौंपा जाए।

40. राज्य के सुकमा तथा बीजापुर जिला को प्रभावित करने वाले पोलावरम बाँध की ऊँचाई सीमित रखी जाए जिससे सुकमा तथा बीजापुर जिले का कोई भी गाँव इसके डूबान क्षेत्र में न आये।

41. अनसूचित क्षेत्रों के जनपद तथा जिला पंचायत में ऐसे अनुसूचित जनजाति वर्ग के सदस्यों का नामांकन किया जाए जिनका उस स्तर पर कोई प्रतिनिधित्व न हो। इस हेतु प्रक्रिया बना कर अधिसूचित किया जाए।

42. राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों में कार्यरत सभी स्वयं सेवी संस्थाओं की समीक्षा की जावे तथा फर्जी कार्य करने वाले संस्थाओं का पंजीकरण ग्राम सभा की अनुशंसा से रद्द किया जावे।

43. जशपुर, सरगुजा, सूरजपुर तथा बलरामपुर से महिलाओं की तस्करी रोकने हेतु ठोस कदम उठाये जाए तथा गाँव के किसी भी व्यक्ति को किसी भी कार्य के लिए गाँव से बाहर ले जाने के पूर्व ग्राम सभा की अनुमति लेना अनिवार्यकी जावे।

44. आन्ध्र प्रदेश की तरह अनुसूचित क्षेत्रों में सभी शासकीय पद सिर्फ अनुसूचित क्षेत्र के अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों के लिए आरक्षित किये जाए।

45. अनुसूचित क्षेत्रों में विशेष रूप से प्राथमिक एवं माध्यमिक शालाओं में सिर्फ अनुसूचित जनजाति वर्ग के ही शिक्षक रखे जाए।

46. राज्य में अनुसूचित जनजाति के लिए संचालित आश्रम शालाओ, एकलव्य विद्यालयों एवं कन्या शिक्षा परिसरों में आदिवासियों की स्थानीय बोली-भाषा, संस्कृति एवं परंपरा अनुसार शिक्षा प्रदान की जाए एवं उनकी गुणवत्ता नवोदय विद्यालय के समकक्ष करने हेतु समीक्षा की जाये।

47. सभी खेल परिषदों में धनुर्विद्या को अनिवार्य रूप से सम्मिलित किया जाए।

48. बस्तर में शान्ति, सुशासन, प्रशासन और नियंत्रण के लिए दुर्गम और पर्वतीय अंचल के बच्चो को केशकाल के पास मारी क्षेत्र के चिन्हित स्थानों में सीबीएसई कोर्स से 1 से ढ्र्कृतक उनकी बोली-भाषा, संस्कृति के साथ आवासीय शिक्षा सुविधा सुलभ करवाई जाए।

49. सभी कन्या आश्रम एवं छात्रावास में सुरक्षाएवं साप्ताहिक जांच हेतु पर्याप्त प्रबंध किये जाए जिससे झालियामारी जैसे भयावह कांड की पुनरावृति रोकी जा सके। इस हेतु कन्या आश्रम एवं छत्रावास में अनिवार्य रूप से अनुसूचित जनजाति के ही महिला अधीक्षक एवं होम गार्ड की नियुक्ति की जावे।

50. एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना (ITDP) के प्रशासक के रूप में अधिकारीयों की नियुक्ति की जावे।

51. आदिवासी इतिहास, कला एवं संस्कृति तथा विशेष रूप से पिछड़ी जनजाति (PVTG) के बारे में जानकारी स्कूल के पाठ्य पुस्तक सम्मिलित की जावे। में

52. जनजातिय सलाहकार परिषद् (ळअउ) की बैठक हर तीन माह में अनिवार्यतः आयोजित की जावे।

53. छत्तीसगढ़ राज्य जनजाति, संस्कृति तथा भाषा आकादमी का गठन तत्काल किया जावे।

54. बस्तर विश्वविद्यालय को केंद्रीय आदिम जनजाति विश्वविद्यालय का दर्जा दिलवाने हेतु पुनः प्रयास किया जाए।

55. बस्तर जिले की अमरीत भतरा जनजाति को भतरा जनजाति की सूची में शामिल किया जाए।

56. पांचवी अनुसूची क्षेत्र में ऐसे सभी गैर-अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों की जांचकरवाई जाए जो अनुसूचित जनजाति की महिला को रख कर के अनुसूचित जनजाति वर्ग के लिए आरक्षित सीट पर चुनाव लड़ कर पद में आसीन है। ऐसे व्यक्तियों पर आत्याचार निवारण अधिनियम तथा धोखाधडी का मामला दर्ज कर एवं ऐसे व्यक्तियों के चुनाव की कार्यवाही संपन्न करवाने वाले अधिकारियों पर दंडात्मक एवं सेवा से पृथक करने की कार्यवाही की जाए।

संख्या के अनुरूप हो आरक्षण का मापदंड

जसवंत मंडावी

बीते कुछ महीनों से छत्तीसगढ़ में आदिवासी आरक्षण पर बहसबाजी और बयानबाजी चर्चा में है, कारण है छत्तीसगढ़ में आदिवासियों के आरक्षण को 32 प्रतिशत से घटाकर 20 प्रतिशत किया जाना। इस कारण आदिवासियों में इस निर्णय का भयंकर विरोध हो रहा है और आक्रोश उभर कर सामने आ रहा है। इसके विरोध में आदिवासियों समाज लगातार हड़ताल और चक्का जाम कर विरोध प्रदर्शन कर रहा है। पर सरकार इस मुद्दे पर अपना बचाव करते नजर आ रही है, वही विपक्ष आरोप लगाकर सरकार को दोषी बना रही है।

क्या है मामला

मामला है स्पेशल सेशन हाईकोर्ट के एक आदेश में इसमें कहा गया है कि 50% से अधिक आरक्षण असंवैधानिक है और इस कारण आदिवासियों का आरक्षण 32प्रतिशत से घटाकर 20% कर दिया गया। अनुसूचित जाति का 13% से बढ़कर 16 व अन्य पिछड़ा वर्ग का 14 पर्सेंट रह गया।

क्या है विकल्प

इस मुद्दे को गंभीरता से लेते हुए सरकार ने विधानसभा सत्र बुलाकर अध्यादेश लाने के बाद एवं महाराष्ट्र, तमिलनाडु और कर्नाटक की आरक्षण का भी अध्ययन करने की बात कह रही है, साथ ही आरक्षण संशोधन विधेयक को नवी अनुसूची में शामिल करने संबंधी बात हो रही।

आरक्षण घटाने से उत्पन्न समस्याएं

आदिवासियों की आरक्षण को कम कर देने के कारण सभी सरकारी परीक्षा एवं भर्तियों में विद्यार्थियों एवं प्रतिभागियों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। मेडिकल कॉलेज में सीटों के आवंटन में कमी होने से कई विद्यार्थी भर्ती से वंचित रह गए। साथ ही बी एड एवं अन्य परीक्षा में भी आरक्षण का वर्तमान नियम ही लागू होने से भारी नुकसान देखने को मिल रहा है, एक तरह से ऊहापोह की स्थिती है, जो आदिवासियों के भविष्य के साथ खिलवाड़ है।

विश्व में कहां कितना आरक्षण?

आज आरक्षण के विरोध में लोगों के तर्क बड़े बेतुके एवम अजीब होते हैं। हमारे देश में ऐसी मानसिकता से ग्रसित लोगों की कमी नहीं है। हमें समझना होगा कि भारत ही नहीं अपितु, विश्व के कई देशों में आरक्षण का प्रावधान है, जिसे उन्हें पूरी निष्ठा और ईमानदारी से दिया जाता है। ताकि वंचित समाज मुख्यधारा में आ सके। दूसरे देशों में इसे एफर्मेटिव एक्शन (सकारात्मक करवाई) के नाम से जाना जाता है। इसका मतलब वर्ण, नस्ल भेद व रंगभेद के शिकार लोगों के लिए समता का प्रावधान उपलब्ध कराना ।डपाकिस्तान ने 5% दलितों के लिए 6% आरक्षण देता है ।डदक्षिण अफ्रीका में आरक्षण के कारण अश्वेत खिलाड़ियों को चयन करना आवश्यक है ।डअमेरिका में फिल्म व्यवसाय या नौकरी सभी क्षेत्र में आरक्षण का प्रावधान है, अब्राहम लिंकन और बराक ओबामा इसके उदाहरण है ।डब्राजील में इसे वेस्टीब्युलर के नाम से जाना जाता है। डफिनलैंड जर्मनी में भी आरक्षण की व्यवस्था है। डजापान में पिछड़े वर्ग को भी आरक्षण मिलता है। डश्रीलंका, स्वीडन में विशेष आधार पर आरक्षण दिए जाते हैं।

आरक्षण को समझना जरूरी

आरक्षण को लेकर विभिन्न वर्गों में अलग-अलग विचार देखने सुनने को मिलता है, लेकिन संविधान निमार्ता यह जानते थे कि, अशिक्षा, सामाजिक पिछडापन, राजनीतिक एवम आर्थिक रूप से कमजोर लोगों का जो शोषण होता आ रहा है। वह उसी प्रकार तब तक चलता रहेगा जब तक कि उन्हें विशेष संरक्षण नहीं मिलेगा। ये कभी भी समाज के मुख्यधारा से नहीं जुड़ सकते, इसलिए इन्हें, एलीट समाज के जैसा सशक्त बनाने के लिए आरक्षण का प्रावधान अत्यंत आवश्यक है। आजादी के पूर्व एवं पश्चात भी दलितों, पिछड़ी जातियों पर उच्च जातियों का रवैया संतोषजनक नहीं रहा है। आज भी जातिगत उपेक्षा भीतर दबा पड़ा है। आज भी दलितों एवं पिछड़ों के प्रति अत्याचार देखने को मिल रहा है। उच्च वर्गों का दबदबा निम्न वर्गों पर बरकरार है। उनके मन से छुआछूत, अस्पृश्यता की भावना अभी समाप्त नहीं हुई है। इस कारण संविधान निमार्ताओं का जो उद्देश्य था वह अभी तक सफल नहीं हो पाया है ।जब तक सभी वंचित वर्ग सभी उच्च सम्मान प्राप्त में नहीं पहुंच जाता है, तब तलक इन्हें संरक्षण की आवश्यकता होगी और उसके आगे भी पीढ़ियों के संरक्षित होने तक इन्हें आरक्षण प्रदान करना होगा।

और क्या क्या प्रावधान है

विश्व में आदिवासी सर्वत्र व्याप्त हैं वे सरल सहज मृदुभाषी अपनी सांस्कृतिक विरासत को सहेजने में निपुण प्रकृति पूजक तथा जल जमीन के संरक्षक हैं। इन्हें बहुत से अधिकार प्राप्त हैं जिनके व्यापक प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है जैसे पेशा कानून यह किसी भी क्षेत्र के आदिवासियों को जल जंगल जमीन की रक्षा और उनके अधिकार की रक्षा के लिए नियम बनाने और उसका संरक्षण करने का अधिकार देता है। वन अधिकार अधिनियम के द्वारा आदिवासियों को वनों पर पूर्णता अधिकार प्राप्त होता है। जिससे आज वंचित किया जा रहा है।

चुनौतियों से निपटारा

आदिवासियों द्वारा देश समाज की रक्षा का इतिहास बहुत पुराना है। चाहे वह भील आंदोलन हो या स्वतंत्रता संग्राम या क्षेत्रीय आंदोलन। सभी में सक्रिय भूमिका रही है। परंतु वर्तमान में बहुत सी चुनौतियां का उन्हें सामना करना पड़ रहा है। डदलगत राजनीति के कारण आदिवासियों के अधिकार पूरी ताकत के साथ सरकार के समक्ष पहुंच नहीं पा रही है। जिन्हें भी नेताओं के रूप में चुनते हैं। वह सक्रिय रूप से सदन ने अपनी बात रखने में असमर्थ है। डआदिवासी क्षेत्रों में अन्य वर्गों के प्रवेश के कारण उनकी जनसंख्या में कमी और रोजगार तेजी से कम हो रहा है ।तथा वन तेजी से कम हो रहे हैं और वे रोजी मजदूरी भी बमुश्किल से कर पा रहे हैं ।डअनेकों राजनीतिक दल होने एवम् उनके एक ना होना, सख्त ना होना, संपूर्ण राज्य तक असर ना होना, उच्च संस्थानों में प्रतिनिधित्व ना होना। समाज के पीछे जाने का कारण है। डअन्य वर्गों का असहयोग भी एक बड़ी समस्या है, जिसके कारण आदिवासी मुख्यधारा से अभी भी सही मायने में नहीं जुड़ पाए हैं ।डवर्तमान में आरक्षण का सही प्रचार-प्रसार उसके परिणाम, लाभ हानि, गुणदोष का सही आकलन करना अत्यंत महत्वपूर्ण है ।ताकि वंचित वर्गो को सशक्त बनाने के लिए आरक्षण निर्बाध रूप से देश की प्रगति में सहायक बन सकें।

कैसे देखते हैं समाज के दिग्गज नेता, समाज की समस्याओं को

(2020-21 में प्रकाशित लोक असर की खास रिपोर्ट)

प्रतिवर्ष 10 दिसंबर को शहीद वीर नारायण सिंह की शहादत को सलाम करते हुए स्मरण करते हुए कई छोटे-बड़े आयोजन होते हैं। मेला-मड़ई का आनंद उठाते राजनीतिक पार्टियों से आए नेताओं के भाषण सुन साथ ही साथ अमर योद्धा को याद करके उनके आदिवासी होने का गुणगान करते विदा हो जाते हैं। और पुनः 10 दिसंबर के आगमन की बाट जोहते रहते हैं,

किंतु वीर मेला का यह तीन दिवसीय आयोजन पूरे भारत में आदिवासियों के जल, जंगल, जमीन छीनकर उन्हें विस्थापित किए जाने का सिलसिला जारी है। और भारत के करोड़ों आदिवासियों को विस्थापन का दंश झेलना पड़ा है। इसके चलते अब उनका अस्तित्व ही संकट में आ गया है। जिसे लेकर लगभग 10 वर्षों से राजा राव बाबा के तपस्थली राजा राव पठार जिसे वीर भूमि कहा जाता है। जो कि रायपुर जगदलपुर नेशनल हाईवे पर धमतरी से 18 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। जहां महान क्रान्तिकारी योद्धा अमर शहीद वीर नारायण सिंह की शहीदी को याद करते हैं। छत्तीसगढ़ प्रदेश के साथ देश के अन्य प्रांतों से भी आदिवासी समाज के प्रतिनिधि शिरकत करते हैं। और महापंचायत में सरकार द्वारा किए जा रहे हैं संविधान प्रदत्त मौलिक अधिकारों का हनन करते हुए जल, जंगल, जमीन से बेदखल किया जा चुके है और किए जा रहे हैं। इससे आदिवासियों की संस्कृति-सभ्यता के साथ जीवन जीने का संकट आ गया है। जिसे लेकर आदिवासी समाज करो या मरो का रास्ता अपनाकर शहीद वीर नारायण सिंह के व्यवहार को आत्मसात् करने का उद्गार करते दिखाई देते हैं।

विदित है, कि प्रतिवर्ष आठ, नौ एवं दस दिसंबर को राजा राव पठार में वृहद वीर मेला का आयोजन किया जाता है। वीर मेला के प्रथम दिवस आदिवासी समाज के मार्गदर्शकों के साथ जो समाज को लेकर चिंतन मनन करते हैं। समाज के विकास के लिए सतत प्रयासरत हैं। उनके द्वारा आदिवासी लोक नृत्य संग ही डांग-डोरी लेकर देवी स्थापना, देव पूजन एवं देव मिलन आयोजन का आधारशिला रखते हैं। तत्पश्चात कार्यक्रम का आगाज मेला स्थल में निर्मित विशाल मंच से किया जाता है इस मौके पर समाज के नेताओं ने सरकार से सवाल किया साथ ही आदिवासी समाज से जीतकर मंत्री विधायक और सांसद बनने वाले नेताओं के प्रतिनिधित्व पर भी सवाल खड़े जाते हैं। क्या हमारे पास ऐसे जनप्रतिनिधि हैं? जो हमारी समस्याओं को समझे विधानसभा, लोकसभा और राज्यसभा में रख सके? जबकि अनेकों समस्याओं से आदिवासी समाज लगातार 75 वर्षो से जूझते आ रहे हैं, बताया गया कि 25 सालों से फर्जी जाति प्रमाण के मुद्दे को लेकर लड़ा जा रहा है। लगभग 780 फर्जी जाति प्रमाण पत्र होने का मुख्यमंत्री ने दावा किया है। यदि एक 1 साल में 25- 25 लोगों को निकालते तो सारे फर्जी मामला निकल चुके होते। पदोन्नति में आरक्षण का संविधान में व्यापक व्यवस्था है, तो उसे क्यों रोका जा रहा है? यह चिंतन का विषय है। जबकि महाराष्ट्र में एक कमेटी है रत्नप्रभा कमेटी जिसने 1 माह में रिपोर्ट तैयार किया। जिसे सुप्रीम कोर्ट में पेश किया गया। आज वहां यह लागू कर दिया गया है। इधर छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा 5 सदस्य समिति को गठित की है, लेकिन इसमें विभिन्न मुद्दों को सम्मिलित कर भटका दिया गया है, और ताज्जुब की बात है कि इस कमेटी की आज पर्यंत एक बैठक तक नहीं हो सकी है।

जनगणना में आदिवासियों का अलग से कालम था

1951-52 तक। लेकिन इसके बाद से आदिवासियों को अलग से गिनना बंद कर दिया गया है। वहीं 1871 से लेकर 1951-52 तक अलग अलग नामों से पुकारा जाता था। जैसे 1871 में एब्रोजिल,1881 में एब्रोरिजिनल, 1891 में फारेस्ट ट्राइब, 1901 से 1911 तक एनिमिस्ट, 1921 में प्रिमिटिव, 1931 में ट्राइबल रिलिजन एवं 1941 से लेकर 1951 तक ट्राइब । इसके बाद से यह सब कालम बंद कर दिया गया है।

अब सवाल है कि क्या आदिवासियों की संख्या बढ़ रही थी? जिसे रोकने लिए यह कदम उठाया गया है। एक बड़ा मुद्दा है समाज के आगे। और इसे लेकर 6 दिसंबर 2020 को 12 राज्यों के आदिवासी समाज के मुखियागण आगामी जनगणना में आदिवासियों के लिए अलग से कालम की मांग की है। इस प्रकार से पूरे भारत में आदिवासियों की संख्या कम हो रही है। इसके मुख्य कारण क्या है? किसी महापुरुष ने कहा है समाज है के विकास थ्रीएम के बिना विकास संभव नहीं है। मनी, पावर एवं मेजॉरिटी। जब तक नहीं होगा विकास संभव नहीं है। इसमेंआज दो और बात जोड़ने होंगे एक मैन्युफैक्चरिंग एवं दूसरा मार्केटिंग नहीं होगा तब तक विकास संभव नहीं है।

आदिवासी धर्मकोड का कालम अलग से हो : सोहन पोटाई

पूर्व सांसद सोहन पोटाई ने कहा कि पहली बार जब आदिवासी समाज की महापंचायत बैठी थी, तो समस्याओं की बिंदु 16 थी। उसके बाद 34 बिंदु की समस्याएं हो गई। फिर 46 और

आज 56 बिंदुओं की समस्याएं सामने है। इससे ऐसा लगता है कि आदिवासियों की आवाज में कोई दम नहीं है या फिर वीर नारायण सिंह की शहादत को एक मनोरंजन के तौर पर यहां वीर मेला जैसे आयोजन कर रहे हैं। जब हमारी आवाज ही बुलंद नहीं होगी, तो सरकार कहां सुनेगी। यही कारण है कि आदिवासियों की समस्याएं प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है। राजाराव बाबा के आंगन में वीर मेला आयोजन का यह सातवां साल है। यही वह स्थल है जहां से 32 प्रतिशत आरक्षण की मांग आदिवासियों ने की थी। इसे लेकर

कांकेर में भी 25 फरवरी 2010 को तकरीबन 50,000 आदिवासियों ने हुंकार भरे थे। लेकिन, तत्कालीन भाजपा सरकार ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। तब इस जगह पर धरना प्रदर्शन एवं चक्का जाम आदिवासी करते थे और उसी का परिणाम है कि हमें 28 प्रतिशत आरक्षण का लाभ मिलना शुरू हुआ। और शहीद वीर नारायण सिंह से प्रेरणा लेकर यहां पर वीर मेला का आयोजन होता है। आदिवासी महापंचायत में जो भी समस्याएं आती है। सरकार से मिलकर उसका समाधान किया जाता है। यहीं पर आगे की रणनीति भी महापंचायत बनाती है। 6 दिसंबर 2020 को समस्त आदिवासी समाज के लोग इकट्ठे होकर बैठक आहूत किए थे। जिसमें अलग से धर्मकोड की मांग रखी गई है। उन्होंने बताया कि 1871 से लेकर 1951 तक आदिवासी समाज के अलग से कलम थी। 1961 में उक्त कालम को हटा दिया गया। आखिर वह कलम कहां गई? यह सवाल है सरकार से। इसे लेकर आदिवासी महापंचायत ने मांग की है कि हमें पुनः उसी स्थिति में लाकर आदिवासी समाज की जनगणना किया जाए। वहीं पूरे भारत के आदिवासी एक बात से राजी हुए कि हमारा धर्म कोड आदिवासी हो।

फर्जी नक्सली जो जेल में बंद है उन्हें बेशर्त रिहा किया जाएगा। वहीं सामूहिक वन पट्टा अधिकार देने की प्रक्रिया चल रही है, जिसमें तेजी लाने की जरूरत है। उन्होंने पखांजूर क्षेत्र के विधायक के संज्ञान में यह बात लाए कि वहां बंगाली वॉइस आदिवासी की लड़ाई है। उन्होंने बताया कि आदिवासियों की एफआईआर तक नहीं लिखी जाती। किसी भी मामले में। विपरीत इसमें आदिवासियों के खिलाफ ही प्रकरण बनाए जाते हैं। ऐसे शासन-प्रशासन में प्रतिनिधित्व करने वालों का कर्तव्य है कि समाज के भीतर क्या चल रहा है संज्ञान लेते रहे।

आदिवासी समाज जिनकी संस्कृति, सभ्यता सदियों से है: कवासी लखमा

आबकारी मंत्री कवासी लखमा ने आदिवासी संस्कृति, आदिवासी मड़ाई, मेला,

उस पीढ़ी के राजनेता नहीं रहे जो सेवा करते थे : अरविंद नेताम

आदिवासी महापंचायत के संरक्षक अरविंद नेताम ने कहा कि समाज को आज की हालात को जानना चाहिए, समझना चाहिए, कि क्या स्थिति निर्मित हो रही है? कौन से कानून बदल रहे हैं? नए नए बदलाव शासन प्रशासन के द्वारा किया जा रहा है। ऐसे में हम पीछे रह गए तो भविष्य में कठिनाइयां आ सकती है। समाज को सरकार के भरोसे नहीं रहना है। सरकार के भरोसे में धोखा खा जाओगे, स्वयं को ही अपनी लड़ाई लड़ना होगा। कोई अब मदद करने इस देश में नहीं आने वाला है। उस पीढ़ी के राजनेता अब नहीं रहे, जो सेवा करते थे। उन्होंने समाज की सबसे बड़ी समस्या बताते हुए यह रेखांकित किया कि शोषण एक ऐसा मजमून हो गया है कि वह चाहे सरकारी हो, गैर सरकारी हो अथवा व्यक्तिगत समाज विशेष द्वारा हो आदिवासियों को जितना ठगना हो ठग लो यह चलन है और यह हमारे भोलेपन सीधा पन का कारण है। जल, जंगल, जमीन की रक्षा करनी होगी! इसके बगैर देश दुनिया एवं आदिवासी समाज का गुजारा नहीं हो सकता। आदिवासियों की जमीन को लेकर विशेष तौर पर बस्तर में मारामारी हो रही है। जिन क्षेत्रों में सिर्फ आदिवासी लोग रहते हैं। आज सभी जगह दूसरी जाति वर्ग के लोग कब्जा कर रखे हैं। जबकि जंगल को सिर्फ है आदिवासी ही बचा के रखा है। इसलिए सारा दबाव केवल और केवल आदिवासी इलाकों में होगा! उन्होंने बिना कोई नाम लिए डौंडीलोहारा विकासखंड के कथित बाबा पर तल्ख शब्दों में टिप्पणी करते हुए कहा कि आदिवासी इलाके में अतिक्रमण कर आश्रम बनाकर एक बाबा दादागिरी कर रहा है, उन्हें भी सबक सिखाया जाएगा। जमीन की रक्षा जंगल की रक्षा के लिए कानून बने हैं बहुत से। उसका हमें उपयोग करना होगा। महापंचायत में पेशा कानून को लेकर विशेष तौर पर बातचीत हुई है उन्होंने पंचायत मंत्री का आभार जताते हुए कहा कि कुछ इस दिशा में सरकार काम कर रही है। उन्होंने पेसा कानून के संबंध में बताया कि 27 सालों बाद तब नियम बना रहे हैं, अपने नेतृत्व काल का जिक्र करते हुए कहा कि हमने कैबिनेट में कानून बनवाए थे। लेकिन, उसके लिए नियम नहीं बना। पेसा क्या है? सभी आदिवासी जानते हैं । उनके द्वारा समाज के लोगों से अपील किया गया कि पेशा कानून को कमजोर करने खत्म करने की साजिश होगी हो रही है, इस

परिपेक्ष में उन्होंने केंद्र सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण कानून को बदलने का उसे भी पेसा कानून के विरुद्ध मानते हैं। यह एक षड्यंत्र है। उन्हें मालूम है कि, जितनी भी खनिज संसाधन है, संपदा है, इस पेसा कानून से केंद्र और राज्य सरकारों को भी बहुत तकलीफ है। नई पीढ़ी से आह्वान करते हुए कहा कि पेशा कानून को बचा सकते हो तो बचा लेना, सरकार इसे कब बदल देंगे भरोसा नहीं है, जिस दिन पेसा कानून बदलेंगे। आदिवासियों का अस्तित्व ही खत्म हो जाएगा। सरकारी स्टॉक में है कि पेशा कानून बदल देंगे हालांकि अभी 2530 साल में इसे छूने की हिम्मत नहीं होगी? लेकिन बहुमत पर कानून बनाते हैं। और बदल देते हैं, इसके प्रति समाज गंभीर रहें। नक्सलवाद पर भी चर्चा की गई। इस बात का फर्क करते हुए कहा कि पहली बार आदिवासी समाज नक्सलवाद देश एवं आदिवासी इलाके के सबसे बड़ी समस्या और चुनौती है हमारे इलाके की समस्या है। हम चर्चा नहीं करेंगे तो कौन करेगा? उन्होंने बताया कि नक्सलवाद से चर्चा करने आदिवासी समाज के लोगों को सरकार बुलाए सब से चर्चा की जाए। लेकिन, दुर्भाग्य कि इस पर आदिवासी समाज को आज पर्यंत चर्चा में शामिल नहीं किया गया? जबकि आदिवासी भी अपनी बात रखना चाहते हैं। आदिवासी कितने सालों से , कितने नजदीक से नक्सलवाद को झेल रहे हैं। देख रहे हैं, इसके लिए सरकार को समाज से सुझाव मांगने चाहिए। उन्होंने नारायणपुर में 10000 आदिवासी जो पूरा अबूझमाड़ को डटे थे, उनसे 15 दिनों की मोहलत लेकर समझाया। यहां पर बहुत से विधायक बैठे हैं। नक्सल समस्या, आंदोलन, विद्रोह हो उसमें जनप्रतिनिधियों को गंभीरता से चिंतन करने की, हिस्सा लेने की जरूरत है। दुख इस बात से होती है, कि 10000 आदिवासियों से बात करने डिप्टी कलेक्टर को भेज दिया जाता है, जो खदान अबूझमाड़ से लगा हुआ है। श्री नेताम ने बस्तर के अधिकांश ग्राम सभा को फर्जी बताया और कहा कि शासन प्रशासन के माध्यम से ही ग्रामसभा फर्जी होगा। तो न्याय कहां से मिलेगा? यह बड़ा सवाल है। यही नारायणपुर में हुआ है। पेशा कानून बने 30 साल हो गया। क्या प्रशासन को पता नहीं है, कि ग्रामसभा कराना है? संविधान की व्यवस्था असली कानून है, ना की जनसुनवाई।

गोटुल प्रथा के संबंध में कहा कि इस वीर मेला

में देवपूजन के बाद हमारे आदिवासी अंचल में मड़ई मेला की शुरूआत होती है। वह चाहे नारायणपुर का मेला हो, सुकमा का मेला हो, बीजापुर का मेला हो, नरहरपुर का मेला हो, पूरे देश में एक ही समाज है, आदिवासी समाज, जिनकी संस्कृति, सभ्यता सदियों से रही है। बस्तर में जो आदिवासी लोक नृत्य है, गायन में सबसे आगे आदिवासी समाज के लोग, भले काम धंधा में पीछे हैं, व्यापार में पीछे हैं, बहुत चीजों में पीछे हैं, लेकिन लोक संस्कृति, लोक सभ्यता को बचाए रखने में सबसे आगे हैं। आदिवासी समाज के लोग मड़ई, मेला, मुर्गा बाजार जाना पसंद करते हैं। आदिवासी समाज के लोग लड़ाई करने में भी आगे हैं। हमारे पूर्वज शहीद गुंडाधुर, शहीद बिरसा मुंडा से लेकर शहीद वीर नारायण सिंह जैसे योद्धा रहे हैं, लेकिन आज लड़ाई हम किससे कर रहे हैं? आदिवासी, आदिवासी ही लड रहे हैं। जिसमें सिर्फ आदिवासी ही मर रहे हैं। चाहे प्रदेश में किसी की भी सरकार रही हो। बस्तर में सलवा जुडूम के समय सुकमा, बीजापुर, दंतेवाड़ा जिला के लोग सबसे ज्यादा प्रभावित हुए है और आंध्र तेलंगाना में पलायन कर गए है उनकी वापसी के लिए भी समाज का प्रयास है। इस ओर सरकार से भी चर्चा चल रही है।

संस्कृति विलुप्त हो रही है बस्तर में

विधायक एवं वीर मेला आयोजन समिति के अध्यक्ष शिशुपाल सोरी ने कहा कि यह वीरभूमि है यहीं पर आदिवासी ने अपने अधिकारों के लिए आवाज बुलंद की थी। आदिवासी समाज में आदिवासी क्षेत्र में जो समस्याएं व्याप्त है जो संस्कृति विलुप्त हो रही है, बस्तर में जो तनाव। उन्होंने आदिवासियों की समस्याओं के संबंध में बताया कि एक केंद्रीय स्तर से संबंधित समस्या है। दूसरा राज्य स्तर से संबंधित समस्या और तीसरा है स्थानीय स्तर की समस्याएं हैं जो कलेक्टरों के अधीन है। सरकार अभी सही दिशा में चल रही है। सरकार आती जाती रहती है, किंतु वर्तमान सरकार की जो कमिटमेंट है, मैं सरकार में मैन्युफैक्करिंग कमेटी में सदस्य था। पांचवी अनुसूची एवं पेशा कानून के प्रभावी

क्रियान्वयन का सूत्रपात भी इसी वीर मेला से हुई है। सन 1995 96 से ऐसा कानून बना क्रियान्वयन क्यों नहीं हुआ। पेसा को लागू करने नियम बनता है। सरकार ने समाज से समस्याएं एवं उसके निराकरण के सुझाव मांगे हैं। सरकार सर्वाधिक पीड़ितों से स्वयं बात करेगी। आदिवासी इलाकों में जो अन्य समाज के लोग भी हैं जो वर्षों से रह रहे हैं वन अधिकार कानून लागू होगा। भले ही सरकार की ताकत कम हो जाय।

शहीद वीर नारायण सिंह की आदमकद मूर्ति स्थापित करवा दिया बेटी की स्मृति में

लोक असर समाचार बालोद

गोंडवाना गोड़ महासभा तहसील बालोद एवं गोंडवाना अधिकारी कर्मचारी संगठन बालोद

स्व.प्रतिमा नागवंशी

द्वारा प्रतिवर्ष 10 दिसंबर को नगर के बस स्टैंड में स्थिता शहीद वीर नारायण सिंह के आदम कद प्रतिमा के निकट सभा का आयोजन कर बलिदान दिवस मनाया जाता है। तथा यहीं से कलश यात्रा की शुरूआत होती है जो राजा राव पठार वीर मेला स्थल पर स्थित देवालय में विसर्जित की जाती है। इस कलश

यात्रा में क्षेत्र के सैकड़ों लोग शामिल होते हैं। नया बस स्टैंड बालोद में स्थापित शहीद वीर नारायण सिंह की आदम कद मूर्ति की स्थापना वर्ष 2010 में बालोद निवासी शिक्षक चेतन सिंह नागवंशी ने अपनी सुपुत्री कुमारी प्रतिमा नागवंशी की स्मृति में किया गया है । लगभग एक लाख पच्चीस हजार रुपए की लागत से बने इस 9 फीट ऊंचे मूर्ति का अनावरण तत्कालीन मुख्यमंत्री रमन सिंह एवं राम विचार नेताम द्वारा किया था। चेतन नागवंशी गोंडवाना गोंड महासभा शाखा जिला बालोद के 17 वर्ष तक परिक्षेत्रीय अध्यक्ष रहे। वह कई कलाओं में पारंगत हैं जैसे, चित्रकला, जादूगरी, पुतलीकला आदि है। उन्होंने बताया कि बालोद जिले में एकमात्र झांकी निमार्ता के रूप में वे जाने जाते हैं। वर्तमान में जादूगर के रूप में अंधश्रद्धा उन्मूलन का निःशुल्क प्रदर्शन शिक्षा विभाग के अनेकों स्कूलों एवं एनएसएस के कार्यक्रमों में करते हैं। ' पर्यटन एवं संस्कृति विभाग कपिलेश्वर मंदिर विकास समिति समूह (अध्यक्ष) बाल संस्कार शाला चलाते हैं, बालोद में तीन स्थानों पर शिकारी पारा, पांडे पारा एवं गांधी भवन में, जिसमें व्यक्तित्व निर्माण पर जोर दिया जाता है साथ ही खेलकूद, योग, नैतिक शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

धनकुल वाद्ययंत्र एवं लोकगीत

दामेसाय बघेल, व्याख्याता

जनजातीय समाज प्रकृति के पूजक हैं।

धनकुल वाद्ययंत्र प्रकृति के संसाधन से वाद्ययंत्र तैयार किया जाता है।जैसे - बांस से धनुष एवं सूपा का निर्माण किया जाता है। झीकन डोरी सिंहाड़ी बेला के डोरी से बनाया जाता है। हांडी दो बड़े आकार के होते हैं जो विशेष प्रकार के आकृति वाले बने होते हैं, जिसे कुम्हार के द्वारा तैयार किया जाता है। गुंडरी/गिरी पैरा से गोल आकृति में बनाया जाता है।

धनकुल दो शब्द से बना है। धन से धनुष और कुला (ओड़िया और बंगला भाषा में कुला का अर्थ सुपा) संभवतः इन्ही दो शब्दों के मेल से बने शब्द को धनकुल कहा जाता है। दो बड़े हांडी को गुडरी किऊपर तिरछी रखी जाती है। ये हांडी समानान्तर एवं तिरछी रखी जाती है। गुंडरी, गिरी धान के पैरा से गोलनुमा आकृति में बनी होती है। तिरछी रखी दोनों हांडी के मुंह को सूपा से ढंक दिया जाता है इसी ढके हुए सूपा के ऊपर धनकुल डांडी का एक सिरा टिका हुआ होता है तथा दूसरा सिरा जमीन पर टिका रहता है। धनुष की डांडी लगभग डेढ़ मीटर होता है। धनुष की डांडी में ऊपरी सिरा की और हल्के खांचे बने होते हैं. जिसमें बड़े गुरूमायें और नानी गुरुमायें नियमित अंतराल पर दाहिने हाथ में खिरनी काड़ी से धनुष के डांडी को इसी खांचे वाले भाग में बार-बार घर्षण करती है तथा बायें हाथ से झींकन डोरी को धनकुल गीत की सुर, लय, ताल के नियमित अंतराल में हल्के-हल्के खींचती है। खिरनी के घर्षण से छरछरे घर की ध्वनि निकलती है। वहीं झींकन डोरी को खींचने पर हांडी से घुम घुम की ध्वनि निकलती है। इस तरह घुम छरं छरं घुम छरं छर्र की सम्मिलित संगीत इस अद्भुत लोक वाद्ययंत्र की ध्वनि उत्पन्न होती है।

धनकुल वादन गायन के पूर्व गुरुमायें वाद्ययंत्र की जलते दीपक कलश की स्थापना कर अपने ईष्ट देवी देवता का पूजा अर्चना करती हैं। इस वाद्ययंत्र एवं लोकगीत के दो गुरुमायें होती हैं। धनकुल वाद्य यंत्र एवं गीत जनजातीय समुदाय की महिलाओं के द्वारा ही बजाई एवं गायी जाती है। धनकुल के गीत को सुर लेने वाले महिलाओं को "चेली" कहा जाता है।

मुख्य गुरूमायें जिसे बड़े गुरूमायें भी कहा जाता है। दूसरी चेली गुरुमायें (नानी गुरुमायें) सीखने की प्रक्रिया से गुजर रहीं होती है। धनकुल गीत अलिखित लोकगीत महाकाव्य के नाम से जाना जाता है। यह धनकुल गीत मुख्य रूप से तीजा पर्व में गाया जाता है। इसे तीन दिन या पांच दिन या सात दिन या नौ दिनों तक गाया जाता है। पूर्व में जनजातीय के लोग सामुहिक रूप से गांव में एक स्थान या देवगुड़ी में एकत्रित होकर बड़ी धूमधाम से तीजा पर्व के समय तीजा जगार धनकुल वाद्ययंत्र के साथ गाते थे जो आज भी बस्तर संभाग के जनजातीय क्षेत्रों में प्रचलित है। तीजा पर्व के लिये धान, जोंधरा और गेहू की भोजली तैयार की जाती है। ईष्ट देवी देवताओं को गीत के माध्यम से आह्वान करने पर सिरहा, गुनिया उत्साह पूर्वक नृत्य करने लगते हैं। अंतिम दिन जनजातीय समाज के पारंपरिक रूप से विधि विधान के साथ विसर्जन किया जाता है। छ.ग. राज्य के बस्तर संभाग जनजातीय लोकवाद्य यंत्र एवं गीत की संरक्षण एवं संवर्धन की आवश्यकता है। (इस शोध आलेख का वाचन राष्ट्रीय जनजातीय साहित्य महोत्सव (19 से 21 अप्रैल 2022) में छत्तीसगढ़ रायपुर किया गया था)

शास. हाई स्कूल अनुपपुर पी. व्ही. 127
जिला उ.ब. कांकेर

पृष्ठ 23 का शेष

राजा राव पठार बना देवभूमि

आदिवासी हार्ड बाजार एवं आदिवासी लोक कला महोत्सव का कार्यक्रम आयोजित किया गया , जिसमें छत्तीसगढ़ के विभिन्न जिलों से आदिवासी लोक कला जत्था ने भाग लिया उसी दिन संध्या 7:00 बजे आदिवासी महापंचायत का कार्यक्रम आयोजित हुआ । इस भव्य आयोजन में राज्य के 42 अनुसूचित जनजाति के प्रतिनिधि उपस्थित होकर अपने विचार प्रकट किए । अंतिम दिवस 10 दिसंबर को शहीद वीर नारायण सिंह की श्रद्धांजलि कार्यक्रम आयोजित की गई जिसमें राज्य भर के पूर्व एवं वर्तमान विधायक गण ,सांसद गण ,मंत्री गण तथा जनप्रतिनिधि व आदिवासी समाज के मुखिया गण कार्यक्रम में सहभागी बने । तब से अब तक इस पावन भूमि में विधिवत " वीर मेला " का आयोजन किया जा रहा है ।जो समय के साथ इस मेले में श्रद्धालुओं की भीड़ भी बढ़ती ही जा रही है ।

पृष्ठ 28 का शेष

जनजातीय कविता भाषा और संस्कृति

ये या मोर हिरदे के मैना–मैना
छतिया ला बान मारे.....
साजा के पेंड़ मा खड़े हे राजा का या खड़े हे राजा ना
तोला मेमरी पिया के मयारु हाय रे करेंव ताजा
ये या मोर हिरदे के मैना– मैना
छतिया ला बान मारे.....

ओ गुलर वृक्षों के गांव में रहने वाले मेरे साथी! तुम्हारी याद मेरे सीने में बाण चला रही है और मेरा मन तड़प रहा है। आम के पत्ते सूख गए हैं। तुम किस दुश्मन की बातों में बहक गए जो मुझे भूल गए। राजा के वृक्ष पर राजा खड़ा हुआ है। मैं तुम्हें मेमोरी (एक वन औषधि) पिलाकर सचेत किया है। ओ मेरे हृदय की मैना! तुम मुझे क्यों भूल गई।

कोइली के गुरतुर बोली मैना के मीठी बोली
जीवरा ला बान मारे रे ....
गिरे ला पानी चूहे ला ओइरछा,
तोर मया मा मयारु मारथे मूरछा।
जीवरा ला बान मारे रे.......

कोयल और मैना की मीठी आवाज हृदय में बाणों की तरह चुभ रही है । पानी बरसने पर छप्पर से पानी टपक रहा है।ओ मेरे प्रिय! तुम्हारे प्रेम के कारण मुझे मूर्छा आ रही है।

सदियों से प्रचलित जनजातीय लोकगीत, कविता वाचिक परंपरा का ऐसा प्रवाह है जिसमें उसके अंतर्मन की व्यथा कथा छलकती है। जनजातीय गीत किसी संस्कृति के मुंह बोलते चित्र की तरह हैं। लोक का भावुक और निर्लिप्त मन जन्म से मृत्यु तक लोकगीतों का संबल ढूंढता है। सच तो यह है कि वह गीत जो कानों को मीठा लगे, हृदय को गुदगुदाए, कण-कण में रचकर मुस्कुराए विशेष अंचल में वहां की बोली में जब गाया जाए और जन- जन के कंठ का हार बने तो वह लोकगीत कहलाता है। लोकगीत खदान से निकले हुए हीरे की तरह होते हैं।

पृष्ठ 30 का शेष

आदिवासी न कल हारा है,

नहीं ले सकेगा। इसके अतिरिक्त पेशा कानून, वन अधिकार कानून यह सब संविधान से प्राप्त होती है। मैं दिल्ली से आता हूं वहां बड़ी-बड़ी इमारतों में, एसी में बैठकर लोग आप के हक का सौदा करते हैं। आप अपने अधिकारों के प्रति सचेत नहीं रहेंगे, अपनी लड़ाई नहीं लड़ेंगे तो जल जंगल जमीन को बेच देंगे। ऐसे में हमें किसी धर्म से नहीं लड़ना है बल्कि अपने हक के लिए लड़ना है। वो धूर्त और चालाक लोग हैं, जो हमारे खिलाफ हमारे ही लोगों को सामने कर देते हैं। धर्म के नाम पर इसलिए लड़ाए जा रहा है ताकि जल जमीन जंगल पर कब्जा कर सके। ऐसे लोगों से सावधान रहना होगा। यदि लड़ना ही है तो रोटी, कपड़ा, मकान के लिए लड़ो, शिक्षा और अस्पताल के लिए लड़ो, अपने हक के लिए लड़ो। यहां छत्तीसगढ़ की सरकार राम वनगमन पथ बनवा रही है, तो एक रास्ता आदिवासियों का पद गमन का भी बनवा दे। देश में आजादी का अमृत महोत्सव मनाया जा रहा है और वनांचलों में बुनियादी सुविधाएं गायब है। आदिवासियों को सरकार उनका हक दे दे तो हर पेड़ पर झंडा फहराएगा। उन्होंने विशाल जनसमूह को आह्वान किया कि अपना नेता किसी को मत होने दीजिए क्योंकि आदिवासी को कोई हरा पाया है क्या? जिनके नायकों ने अंग्रेजों के सामने नहीं झुका। आदिवासी न कल हारा है, न आज हारेगा, ना कभी कोई हरा पाएगा। लेकिन खतरा बढ़ गया है, विकास के नाम पर जल जंगल जमीन छीनी जा रही है। आदिवासी को आदिवासी से लड़ाया जा रहा है धर्म के नाम पर, बाहरी लोग बता रहे हैं तुम हिंदू हो तुम्हारे देवी देवता यह है, तुम्हें ऐसी पूजा करना है। तो मैं पूछना चाहता हूं आदिवासियों के रीति रिवाज कौन तय करेगा? आदिवासी। आदिवासी किसकी पूजा करेंगे कौन तय करेगा? आदिवासी। अपने हक अधिकार की लड़ाई कौन लड़ेगा? आदिवासी, तो यह बाहरी लोग आदिवासियों को बताएंगे उन्हें क्या करना है क्या नहीं करना है, जबकि आदिवासी संथाली भाषा में प्रकृति की पूजा करते हैं, प्रकृति ही आदिवासियों के देवी देवता है।

डॉ. लक्ष्मण यादव अपने ट्वीट में लिखते हैं जंगल में कई किलोमीटर तक मूसलाधार बारिश में भीगते भागते पैदल चलकर हजारों आदिवासी विश्व आदिवासी दिवस का समारोह मनाने पहुंचते हैं, यह किसी नेता के लिए नहीं, किसी धर्म के लिए नहीं बल्कि अपनी आदिवासीयत की पहचान को बचाने के लिए पहुंचते हैं।विश्वआदिवासीदिवस2022 के मौके पर छत्तीसगढ़ के सुदूर घने जंगलों के बीच बरसते हुए अनवरत जल में भींगते हुए जमीन के मालिकाना हक की आवाज बुलंद करते आदिवासियों से हिम्मत लेकर लौटा हूँ. सूखे महुए का हार, पीली पगड़ी, पीले चावल का तिलक और जोहार का उलगुलान साथ लाया हूँ. ज़िंदाबाद।कार्यक्रम को आदिवासी समाज के वरिष्ठ कार्यकताओं ने भी सम्बोधित किया। इस अवसर पर समाज के लोगों ने अपने परम्परागत अस्त्र -शस्त्र, तीर कमान, फरसा एवं वेशभूषा से सुसज्जित होकर अपनी आदिम संस्कृति से आबद्ध विभिन्न विशिष्ट शैली में नृत्य प्रस्तुत करते हुए यू आर गंगराले के नेतृत्व में आंगादेव के साथ जामडीपाट पहुंच कर पूजा अर्चना कर वापस तुएगोंदी आए जहां पर मंचीय कार्यक्रम था। किसी अप्रिय अनहोनी घटना के मद्देनजर बड़ी संख्या में पुलिस बल तैनात की गई थी।

गोंडी धर्मकोड का पृथक कॉलम की मांग उठी

लोक असर समाचार

विश्व आदिवासी दिवस कार्यक्रम गोंडवाना गोंड महासभा एवं आदिवासी समाज के द्वारा साइंस कॉलेज मैदान न्यायधानी बिलासपुर में भूपेश बघेल जी मुख्यमंत्री छत्तीसगढ़ शासन के मुख्य आतिथ्य एवं शिशुपाल शोरी विधायक कांकेर, संसदीय सचिव छत्तीसगढ़ शासन, राष्ट्रीय अध्यक्ष गोंडवाना गोंड महासभा की अध्यक्षता, वर्चुअल अतिथि वक्ता डॉ वाफुला सीईओ वामुला इंटरनेशनल केन्या विशिष्ट अतिथि भानु प्रताप सिंह ठाकुर अध्यक्ष अनुसूचित जनजाति आयोग छत्तीसगढ़ शासन , अटल श्रीवास्तव अध्यक्ष पर्यटन मंडल छत्तीसगढ़, शैलेश पांडे विधायक बिलासपुर, रश्मि आशीष सिंह ठाकुर विधायक तखतपुर, सच्चिदानंद गोंड कोलकाता पश्चिम बंगाल, राजेश गोंड प्रदेश अध्यक्ष उत्तर प्रदेश, मूलचंद गोंड प्रदेश महामंत्री उत्तरप्रदेश, दिवाकर पेंदाम राष्ट्रीय सचिव महाराष्ट्र, गीता चिदरी बीदर कर्नाटक, खामसिंह मांझी राष्ट्रीय उपाध्यक्ष गोंडवाना गोंड महासभा उड़ीसा, लोकेंद्र सिंह राष्ट्रीय महासचिव,प्रदेश अध्यक्ष छत्तीसगढ़ गोंडवाना गोंड महासभा नीलकंठ टेकाम आईएएस संचालक कोष एवं लेखा छत्तीसगढ़ शासन, बिसन सिंह परतेती प्रदेश अध्यक्ष गोंड समाज महासभा मध्यप्रदेश, महेंद्र नायक प्रदेश अध्यक्ष उड़ीसा, बी.एल. कोर्राम राष्ट्रीय अध्यक्ष अखिल गोंडवाना गोंडी साहित्य परिषद , नितिन पोटाई सदस्य अनुसूचित जनजाति आयोग, अर्चना पोर्ते सदस्य अनुसूचित जनजाति आयोग, नंदकिशोर राज, वंदना उईके, सुभाष परते, डॉ चंद्रशेखर उइके, आयुष सिंह राज, सूरज मरकाम थे। कार्यक्रम का संचालन अनुसूचित जनजाति शासकीय सेवक विकास संघ छत्तीसगढ़ के प्रदेश अध्यक्ष एवं महासभा के महासचिव आर एन ध्रुव एवं आभार प्रदर्शन महासभा के संभागीय संयोजक जिला अध्यक्ष अनुसूचित जनजाति शासकीय सेवक विकास संघ बिलासपुर रामचंद्र ध्रुव द्वारा गया।

विश्व आदिवासी दिवस पर्व को ऐतिहासिक बनाने के लिए 07 अगस्त को बिलासपुर शहर में सैकड़ों की तादाद में युवाओं ने बाइक रैली निकाली। 08 अगस्त को देव परघावनी का कार्यक्रम किया गया ।जिसमें हजारों की तादाद में बिलासपुर शहर के लोग जुटे। 09 अगस्त को प्रातः से ही जरहाभाटा छात्रावास से हजारों की तादाद में समाजिक जन पारंपरिक वेशभूषा में अस्त्र-शस्त्र तीरझ तलवार से सुसज्जित शहर में रैली निकाली गई। ऐतिहासिक रैली के कारण कई घंटों तक शहर में जाम की स्थिति निर्मित हो गई। कार्यक्रम में समाज के विशिष्ट महान विभूति नवरत्नों का सम्मान हुआ। राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित इस कार्यक्रम में छत्तीसगढ़ प्रदेश सहित विभिन्न राज्यों से लाखों की तादाद में सामाजिक जन सम्मिलित हुए। इस अवसर पर मुख्यमंत्री भूपेश बघेल ने विश्व आदिवासी दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं प्रेषित करते हुए कहा कि आदिवासी समाज आजादी की लड़ाई में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिए थे। उन्होंने समाज की मांग पर गोंड राजा रघुराज सिंह स्टेडियम या सत्यम चौक में गोंड राजा रघुराज सिंह का स्टेचू व शिलालेख लगाने की घोषणा किए। अतिथि वक्ता श्री राबर्ट वाफूला ने वर्चुअल संबोधन में केन्या के राष्ट्रपति का संदेश विश्व आदिवासी दिवस कार्यक्रम में प्रस्तुत किए। उन्होंने कहा कि भारत देश एवं केन्या की संस्कृति लगभग एक बराबर है। भारत के आदिवासी समाज यदि केन्या आना चाहें तो उनका स्वागत है। उन्होंने केन्या में व्यापार व्यवसाय उद्योग लगाने के इच्छुक उद्यमों को केन्या में व्यवसाय लगाने हेतु ऑफर

गोंडी धर्मकोड का पृथक कॉलम आगामी जनगणना में हो इस हेतु विधानसभा में प्रस्ताव पारित कर केंद्र सरकार को भेजा जावे

किए। अध्यक्षता कर रहे श्री शोरी ने कहा कि आदिवासी समाज की संस्कृति मानवतावादी है। समाज का पर्यावरण संरक्षण जल, जंगल, जमीन से गहरा नाता है। स्वागत उद्बोधन करते हुए श्री टेकाम जी द्वारा छत्तीसगढ़ में पेसा का नियम बनाए जाने पर मुख्यमंत्री का आभार माना। इस अवसर पर मुख्यमंत्री को निम्न अनुसार ज्ञापन सौंपा गया। छत्तीसगढ़ के कुल आबादी में 20% गोंड समाज की जनसंख्या है। राजधानी रायपुर में समाज का कोई भवन नहीं होने से दूर-दूर से आने वाले लोगों को ठहरने, सामाजिक कार्यक्रमों, बैठक आयोजित करने हेतु जगह के अभाव में काफी परेशानी का सामना करना पड़ता है। अतः छत्तीसगढ़ के नया राजधानी रायपुर में 5 एकड़ जमीन एवं भवन बनाने हेतु रुपए एक करोड़ स्वीकृत करने,अनुसूचित जाति/ जनजाति वर्ग के लिए पदोन्नति में आरक्षण हेतु राज्य सरकार परिणामिक वरिष्ठता सहित नियम बनाकर पदोन्नति में आरक्षण की बहाली करने, अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे अत्यंत प्राचीन भाषा गोंडी को बचाए रखने हेतु गोंडी साहित्य अकादमी का गठन छत्तीसगढ़ में हो। धर्म, संस्कृति ,रीति-रिवाजों के संरक्षण संवर्धन हेतु गोंडी धर्म कोड का पृथक कॉलम आगामी जनगणना में हो इस हेतु विधानसभा में प्रस्ताव पारित कर केंद्र सरकार को भेजा जावे। न्यायधानी बिलासपुर में गोंड़वाना गोंड़ महासभा छ.ग. का विशाल सामूहिक भवन हेतु 5 एकड़ भूमि सह अत्याधुनिक राष्ट्रीय स्तर का भवन स्वीकृति एवं भवन का नामकरण समाज के गौरव डॉ. भंवर सिंह पोर्ते जी के नाम पर हो। सर्वसुविधायुक्त स्नातक एवं स्नातकोत्तर छात्रावास का निर्माण, जिसमें सेन्ट्रल लॉयबेरी, व्यापंम पूर्व परीक्षा, पीएससी पूर्व परीक्षा, कला एवं संस्कृति, गणित एवं अंग्रेजी विषय के शिक्षक तथा स्पोर्ट्स शिक्षक की सुविधा हो। मंगला चौक में वीरांगना महारानी दुर्गावती का स्टेचू एवं शिलालेख उत्कीर्ण किया जाएं। गोंड़ राजा रघुराज सिंह स्टेडियम में या सत्यम चौक में गोंड़ राजा रघुराज सिंह का स्टेचू एवं शिलालेख उत्कीर्ण किया जाएं। गोंड़ पारा वॉर्ड का नामकरण गोंड़ महाराजा चक्रधर सिंह पोर्ते के नाम पर किया जाने। छत्तीसगढ़ में फर्जी जाति प्रमाण पत्र धारियों के खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं हो रहा है फर्जी प्रमाणपत्र धारियों के खिलाफ तत्काल निलंबन विभागीय जांच, एफआईआर करने की घोषणा किया जाने।

शासकीय पोस्ट मैट्रिक आदिवासी बालक छात्रावास जरहाभाटा, बिलासपुर को दानवीर स्व. हरिदीन पोर्ते के नाम पर नामकरण किया जाने। छात्रावास 50 वर्ष पुराना है जो जीर्णझशीर्ण स्थिति में है। उसे नए कलेवर में 20 करोड़ की लागत से सर्व सुविधा युक्त अत्याधुनिक छात्रावास बनाई जाने। छात्रावास में अध्ययनरत छात्रों की भोजन हेतु राशि प्रतिमाह 2,000 /- रुपए किया जाएं।देश में न्यायाधीशों की भर्ती प्रक्रिया में पारदर्शिता लाने हेतु कॉलेजियम सिस्टम बंद हो एवं न्यायाधीशों की भर्ती यूपीएससी की तर्ज पर हो। इस हेतु विधानसभा छत्तीसगढ़ से प्रस्ताव पारित कर केंद्र सरकार को भेजा जाने। नगर निगम बिलासपुर के रानी दुर्गावती नगर खमतराई बुढादेव स्थल में आदिवासी समाज के लिए सामुदायिक भवन हेतु रु. पचास लाख राशि स्वीकृत किए जाने। मुंगेली जिला के लोरमी विकासखंड में अति पिछड़ी जनजाति आदिवासी बैगा समाज के लोग प्रमुखता से रहते हैं।छात्रावास नहीं होने के कारण आदिवासी समाज के बच्चे शिक्षा से वंचित हो रहे हैं। इसलिए मुंगेली में 100 सीटर छात्रावास खोला जाने की मांग मुख्यमंत्री के पास रखी गई। मुख्यमंत्री ने उपरोक्त मांगों को परीक्षण कर विचार करने का आश्वासन दिए। कार्यक्रम में छत्तीसगढ़ के अलावा पूरे देश भर से लाखों की संख्या में सामाजिक जन उपस्थित थे।